।। ध्यान समाद को अंग ।।

मारवाडी + हिन्दी

*

महत्वपूर्ण सुचना–रामद्वारा जलगाँव इनके ऐसे निदर्शन मे आया है की,कुछ रामस्नेही सेठ साहब राधाकिसनजी महाराज और जे.टी.चांड्क इन्होंने अर्थ की हुई वाणीजी रामद्वारा जलगाँव से लेके जाते और अपने वाणीजी का गुरु महाराज बताते वैसा पूरा आधार न लेते अपने मतसे,समजसे,अर्थ मे आपस मे बदल कर लेते तो ऐसा न करते वाणीजी ले गए हुए कोई भी संत ने आपस मे अर्थ में बदल नही करना है । कुछ भी बदल करना चाहते हो तो रामद्वारा जलगाँव से संपर्क करना बाद में बदल करना है ।

* बाणीजी हमसे जैसे चाहिए वैसी पुरी चेक नही हुअी,उसे बहुत समय लगता है। हम पुरा चेक करके फिरसे रीलोड करेंगे। इसे सालभर लगेगा। आपके समझनेके कामपुरता होवे इसलिए हमने बाणीजी पढनेके लिए लोड कर दी ।

|| अथ ध्यान समाद को अंग लिखंते ||

|| साखी ||

मिलीया जाय अरूप सूं || सुखसागर के माँह ||
ज्याँ पूंता सुखराम के || जामण मरणो नाँह || १ ||

सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,जिसका रूप नही ऐसे सतस्वरुप ब्रम्ह से जाकर मिल गया,सुख के सागर मे मै मिल गया । जिस जगह पर जनम लेना और मृत्यु नही है,मै उस जगह पर जाकर पहुँचा || १ ||

ईसन आदन उत्तपत्ती || ना दूजा को भेळ ||
सुखराम अरूपी बाग में || आक न आंब न केळ || २ ||

वहाँ इस याने पारब्रब्ह भी नही है व आद(आदी माया भी)नही और वहाँ उत्पत्ती भी नही है और वहाँ दूसरे किसीका मिश्रण भी नही है,यानी वहाँ सतस्वरुप के शिवा दूसरी कोई माया नही । अरूपी(दिखाई न देने वाले)बाग मे आक याने रूई का पौधा)नही और आम और केले के वृक्ष भी नही है || २ ||

गरजे बोहो मेके घणो || दिष्ट न देख्यो जाय ||
सुखराम दास उण बाग मे || एक तमासो माँय || ३ ||

वहाँ बहुत ही गर्जना होती है और वहाँ सुगन्धी भी बहुत है लेकिन वह आँखो से दिखती नही परन्तु उस बाग मे एक तमाशा है || ३ ||

बिन पाखाँ पर बाहरो || भंवर भणके मांय ||
दिष्ट मुष्ट में न बंधे || भोळप रत्ति न काँय || ४ ||

वहाँ एक भँवरा है उसे पंख भी नही है और परा भी नही है । ऐसा भँवरा(शब्द)वहाँ गुंजार करता है । वह भँवरा आँखो से देखा नही जाता और मुट्ठी मे पकड़ा भी नही जाता । (मै जो कहता हूँ ,यदी उसे कोई कहेगा,कि मै भोलेपन से यह बात कह रहा हूँ),तो मेरे भोलेपन की रतीभर भी गुंजाइश ही नही है || ४ ||

भंवरे बाग डंढोळियो || कळी कळी रस लेह ||
पीवत परसत पेम रस || दिष्ट न आवे देह || ५ ||

उस भँवरे ने(शब्दने)बाग(ब्रम्हांड)सब ढुंढ लिया और कली-कली का रस लेता है और वहाँ प्रेम का रस परसता है,परन्तु उस भँवरे का शरीर आँखो मे आता नही है || ५ ||

ब्रम्ह बांग मे रम रहयो || मगन भयो मन मांय ||
सुखराम दास उन भंवर के || अे निस सर भर जाय || ६ ||

ब्रम्ह बाग मे भंवरा रमण कर रहा है और मन मे मग्न हो गया । उस भंवरे का रात-दिन बराबर जाता है ऐसा आदि सतगुरु सुखरामजी महाराज बोले । || ६ ||

फूल फूल की बास ले || भंवर रहयो मसताय ||

सुखराम तलब पाछी पड़ी ।। उड़ नहि दूरो जाय ।। ७ ।।

वह भंवरा फुल-फुल की खुशबू लेकर,मस्त हो गया है । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि तलब पीछे छूट गयी,वह भंवरा अब उड कर दूर जाता भी नही है । ।।७।।

मुदे बाग में रूख बों ।। सिरें पोप मे फूल ।।
सुखराम दास वो भंवर सो ।। रहयो रात दिन झूल ।। ८ ।।

उस के मुदे बाग मे वृक्ष अनेक है और श्रेष्ठ पुष्पो मे फूल है । उस फूलो मे भवरा रात-दिन झूल रहा है ।। ८ ।।

पोपन छाडे. पलक जूं ।। रहयो रिझ उण धाम ।।
सुखराम दास इण फूल मे ।। चंचल चेतन काम ।। ९ ।।

भंवरा उस फूल को एक पल भी छोडता नही है । भंवरा उस धाम मे रीझ गया है,उस फूल मे चंचल चैतन्य काम है ।। ९ ।।

दोय पांख के बीच मे ।। इमरत चवे सु बास ।।
सो रस ले सुखरामजी ।। भंवर तजे जुग आस ।। १० ।।

दो पंखुडीयों के फूल मे(त्रिगुटी मे)अमृत टपकता है । उसकी खुशबू आती है । वह रस लेकर ,भंवरा संसार की आशा छोड देता है ।(उस सुख के आगे संसारीक सुखो की आशा नही रहती),ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। १० ।।

निरभे नेहचळ मगन सो ।। आद न आस न चाय ।।
सुखराम सेहेज सुख त्रिगुटी ।। भंवर बिराजे मांय ।। ११ ।।

उस जगह पर निर्भय,निश्चल होकर वहाँ के सुख मे मग्न होता है । आदी भी नही और आशा भी नही और किसी तरह की चाह भी नही वहाँ त्रिगुटी मे सहज सुख है । (अगाध बोध ग्रंथ ये श्लोक ६२ और ६३ मे कहे अनुसार),वहाँ शब्द त्रिगुटी मे गया,यानी सुख प्राप्त होता है,वह सुख लेने के लिए हंस त्रिगुटी मे रहता है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।११।।

सातग राजस तामसी ।। अे तीनु उण धाम ।।
सुखराम निरत कर परखिया ।। काया उतपत काम ।। १२ ।।

सत्वगुण(विष्णु),रजो गुण(ब्रम्हा),तमोगुण(महादेव),इन तीनो का वही धाम है । मैने निरत करके वहाँ परीक्षा की,वहाँ काया की उत्पत्ती होती है,काम विर्य का स्थान भृगुटी है । भृगूटी से वीर्य छूट कर,गर्भ मे पडता है,उस वीर्य से शरीर की उत्पत्ती होती है,ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १२ ।।

ज्याँसूँ उड़ जुग आविया ।। देख्यो वो घर जाय ।।
सुखिया बरसे तेज सो ।। देव बिराजे मांय ।। १३ ।।

मै भृगुटी से उडकर,संसार मे आया था । वह घर(भृगुटी)पुन: जाकर देखा,उस जगह पर तेज बरसता है,उस जगह कामदेव रहता है,ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।१३।।

इण घर कूं हम बीछड़या ।। भँविया भवन अपार ।।
दुख सुख सो सुखराम के ।। लागा हंस जुग लार ।। १४ ।।

इसी घर से(भृगुटी से)मेरा वियोग हुआ था और वहाँ से अलग होने पर,अनेको भवनों मे याने देहो मे जिसका पार नही इतने देहो मे आज तक उडता रहा । यहाँ भृगुटी से हंस निकला यानी इस हंस के पीछे दु:ख और सुख लग जाते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।१४ ।।

सुखराम केहे सब सांभळो ।। अेक देश के मांय ।।
मन पवना दोनु मिले ।। सास शब्द गरणाय ।। १५ ।।

आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,सभी सुनो । मन और पवन ये दोनो एक देश मे मिलते है श्वास और शब्द इनमे मिलकर ये सभी गर्जना करने लगते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १५ ।।

दूजी मैं पोळयाँ सुण्यो ।। अभे इधक पेदास ।।
ता आगे सुखरामजी ।। सेंस पयांळू बास ।। १६ ।।

वहाँ से दूसरा दरवाजा मै सुना,वहाँ अभय(भयरहीतपना)बहुत होता है । उसके आगे पाताल मे शेष रहता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। १६ ।।

अेक अंचबो देखियो ।। नाग लोक मे जाय ।।
दूनियाँ कूं सुखराम के ।। नागण सेस न खाय ।। १७ ।।

मै नाग लोक मे जाकर एक आश्चर्य देखा । वहाँ रहने वाले लोगों को और यहाँ से वहाँ जाने वाले लोगों को नागीन खाती नही है । वह नागीन बंकनाल का मुँह अपने मुह मे पकडकर बैठी है वह नागीन माया की है इसलिए किसी को डसती नही है परन्तु अनेक संत उससे डर जाते है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १७ ।।

लोक बसे पाताळ में ।। तिन की या बिध होय ।।
सब सिर छत्तर धात का ।। नर नारी के जोय ।। १८ ।।

पाताल मे जो लोग रहते है उनकी यह विधी है । उन सभी लोगों के सिर के उपर धातू का छप्पर है । स्त्रीयाँ-पुरूष सभी के सिर पर,धातू का छप्पर देखने मे आता ।।१८ ।।

च्यार नार नर अेक हे ।। रहे बराबर जोय ।।
अेक पुरष के मान हे ।। दूजी कमकम होय ।। १९ ।।

एक-एक मनुष्यों को चार-चार स्त्रीयाँ है और वे मनुष्य के साथ ही रहती है उसमे से एक स्त्री-पुरूष से ऊँची होती है । दूसरी स्त्री,उससे कम ऊँची होती है ।। १९ ।।

अेक अेक सुखाटरी || तीजी उन सूं जाँण ||
चोथी तो सुखराम क्हे || निपट बावणी ठाँण || २० ||

एक-एक स्त्री,एक दूसरे से ठिंगनी और तिसरी स्त्री,चौथी से ठिंगनी जानो और चौथी स्त्री तो,आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,बावन अंगुली ऊँची सी ही रहती है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || २० ||

सेस लोक सब देखियो || अेक तमासो ओर ||
सुखराम छत्तर नन नार सिर || दिन दिन काडे मोर || २१ ||

मैने वह शेष लोक सभी देखा । उसमे(शेष लोक मे)एक तमाशा अधिक है । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,सभी स्त्री-पुरूष के उपर छप्पर है,(वे छप्पर)जैसे मोर अपने पंख का छत्तर निकालता है,उसी प्रकार दिनो-दिन वहाँ के स्त्री-पुरूष छत्तर निकालते है । || २१ ||

ऊँचा नीचा होत हे || इत उत पलट न जाय ||
सेस लोक सुखराम के || सब के अे अंग मांय || २२ ||

उसमे वहाँ के मनुष्यों को उपर और नीचे होते आता है परन्तु इधर और उधर पलटा जाता नही है और इधर उधर जाते भी नही आता है,शेष लोक के सभी मनुष्यों का ऐसा स्वभाव है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले || २२ ||

मुख सेंसर जिभ्या घणी || सब फणा नीचे होय ||
रंरकार सुखराम के || रटे निसो दिन जोय || २३ ||

उस शेष के हजार मुँह है और जीभ भी बहुत है और सभी फन नीचे झुके हुए है,वह शेष रात-दिन ररंकार शब्द की रटन करता है,ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।२३।

अनंत तमासा ओर हे || काहाँ लग के सुखराम ||
हम ताकिदी जळद सुं || जाणो सत्त उण धाम || २४ ||

उस शेष लोक मे और भी अनंत तमाशे है वो मै कहाँ तक कहूँ । मुझे तो आगे जल्दी जाने की ताकीद है । मुझे तो उस सत्तधाम मे जल्दी जाना है,यहाँ रहकर तमाशा देखने की,मुझे फुरसत नही है । || २४ ||

नार तीन चंचल भई || हम कूं किया उदास ||
सेस लोक सब देखिया || तजो प्याँल को बास || २५ ||

वहाँ तीन स्त्रीयाँ( )चंचल होकर,मुझे उदास कर दिया । शेष लोग व सभी पाताल लोग मे रहना मैने छोड दिया || २५ ||

भूल रहा था देश कूं || आद ठिकाणो राम ||
सुखिया सत्तगुर भेद दे || पूंचा या निज धाम || २६ ||

मै आगे के देश को(यहाँ शेष लोक मे रहकर)भूल गया था । राम को और आदी स्थान को मै भुल गया था । परन्तु आदि सद्गुरू ने भेद देकर निज धाम मे पहुँचा दिया ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। २६ ।।

काया मे ब्रहमंड रे ।। देखाया तिहुँ लोक ।।
सुखिया ताँ पर ओर रे ।। दरसी सत्त पर मोख ।। २७ ।।

इस काया मे ब्रम्हाण्ड और तीनो लोक देख कर आया परन्तु उसके भी उपर याने अधिक याने सत्त के इस भी उपर,परम मोक्ष दिखाई दिया ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। २७ ।।

ताळा तोडुँ भेद सुं ।। खोलूं पोल बिचार ।।
सुखराम दास गढ पर चड़े ।। सिरे पोळिया लार ।। २८ ।।

सतगुरू के भेद से ताला तोडकर और दरवाजे खोलकर उपर चढने का विचार किया । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,मै गढ पर चढ गया । अच्छे श्रेष्ठ द्वारपाल जो थे वे मेरे साथ थे । ।। २८ ।।

धुजा यो सब स्हेर कूं ।। कीयो जेर निराट ।।
सुखराम ब्रम्ह मुजरे चल्या ।। ज्याँ खुली मेर की बाट ।। २९ ।।

सबको झकझोर कर शहर को जेर कर दिया और सतस्वरुप ब्रम्ह से मुजरा करने के लिए आगे चला,तब वहाँ मेरू का रास्ता खुला ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२९।।

मानी संक निराट ले ।। मिल्या अगाऊ आण ।।
सब नगरी सुखराम के ।। छोडी कड़वी बाण ।। ३० ।।

मै निशंक बिना किसी शंका के धीट होकर आगे चला । आगे आगवानी करने वाले मिले वहा गया । वहाँ सभी नगरी के लोग कडुवा बोलना छोड दिए वह मुझसे मीठा बोलने लगे । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।३०।।

बड़ा पटायत भोमियाँ ।। हाकम सहत बखाण ।।
सुखराम चल्या सत्त स्याम मे ।। हुवा लीन सब आण ।। ३१ ।।

तो वहाँ के बडे जहागीरदार,गावों के जमींनो के हिस्सेदार और मैजिस्ट्रेट सहीत सभी ही मेरे से बोलने लगे । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले,जब मै सत्स्वामी की तरफ जाने लगा । तब ये सब ही बडे(जहागीरदार,मुलूकके हिस्सेदार,मैजिस्ट्रेट)ये सभी आकर,मुझसे लीन हो गये ।। ३१ ।।

पेली पोळ उघाड़ दी ।। प्रेम सिपाई जाग ।।
तब हम आगू अे हूवा ।। मन बुध चित्त बेराग ।। ३२ ।।

सबसे पहले प्रेम सिपाही जागकर आकर,पहला दरवाजा खोल दिया तब मै और मेरे साथ

मे, मन,बुद्धि,चित्त और बैराग्य आगे चले ।।३२।।

खोली पोळ खटाक दे ।। वार ढील नहि होय ।।
धूजी धर सुखरामजी ।। बसती नगरी लोय ।। ३३ ।।

इन्होने आगे दूसरा दरवाजा तुरन्त खोल दिया। दरवाजा जब खुला तब पृथ्वी कांपने लगी और बस्ती(गाँव,नगर)और सभी मनुष्य कापने लगे। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ३३ ।।

दूजी लंघ सुखरामजी ।। आगुँ किया तब प्राण ।।
तीन लोक धर सेहर को ।। आयो मुदी बखाण ।। ३४ ।।

दूसरे दरवाजे को लांघकर प्राण को आगे किया । तीनो लोक धरणी और शहर के मुखिया आये और बखाण करने लगे । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। ३४ ।।

जाणे वो आगे किया ।। पाछे संत सुजाण ।।
अे जोधा सुखरामजी ।। तीजी पोळ बखाण ।। ३५ ।।

उन्होने जानने वालो को आगे किया और मै पीछे–पीछे चलने लगा । मै तो जानकार था,ये योद्धा,आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,तीसरे दरवाजे का बखाण करने लगे ।।३५।।

पवन परसण सील जल ।। तीन लोक नो नाथ ।।
वाहाँ बिलम्या सुखरामजी ।। राग रूप बोहो बात ।। ३६ ।।

पवन,परसण,सीळ,जळ व वहाँ हवा मन को प्रसन्न करने वाली है वहाँ तीन लोको का नाथ है । वहाँ राग(गाने की राग–रागीणीयाँ)और वहाँ अनेको प्रकारके रूप और बातें देखने मे मै उलझ गया । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ३६ ।।

अेता चाळा चालिया ।। करे अनोपम ख्याल ।।
सन मुख सच सुखरामजी ।। दसूं द्रग लीया पाल ।। ३७ ।।

वे वहाँ इतनी चाल करने लगे और जिसको उपमा देते नही आती ऐसे अनुपम खेल करने लगे । वहाँ प्रत्यक्ष सामने दसो द्रिगपाल लाये । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।३७।

बावण चोवटां बीसले ।। फिरिया गळी अनेक ।।
बिध बिध का सुखरामजी ।। दरसण परसण पेख ।। ३८ ।।

नाभी स्थान मे बहत्तर चौवटी का चौक है । उसमे तथा अनेको गलियों मे मै फिरा और वहाँ विधी–विधी का दर्शन परसण देखा । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।३८।।

तीना चवटां राग हुवे ।। दोया ग्यान बिचार ।।
छटे में सुखरामजी ।। सब तत्त छाणण हार ।। ३९ ।।

बहत्तर चौको मे से तीन चौको मे राग-रागिणी थी और दो चौक मे ज्ञान और ज्ञान का विचार होता है और छठवे चौक मे,सभी तत्तों की ध्यान करने वाले ज्ञानी है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ३९ ।।

दोयां चवटा ख्याल हे ।। लीला भोग अनेक ।।
बीसा में सुखराम के ।। सब जुग नाचे देख ।। ४० ।।

और दो चौक मे खेल तमाशा होते है । वहाँ अनेक प्रकार की लीला है और कई प्रकार के भोग है और वीस चौकों मे पूरे संसार को नाचते हुए देखा । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ४० ।।

सब चवटां के बीच में ।। हाटां माल अनेक ।।
बिध बिध का सुखराम के ।। ख्याल तमासा पेक ।। ४१ ।।

सभी चौको के बीच मे दुकाने है और दुकानो मे अनेक प्रकार का माल है और विधी-विधी के खेल तमाशे देखा । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ४१ ।।

याँ माया आडी फिरे ।। लुळ लुळ लागे पाय ।।
काचे कूं सुखराम के ।। राखे या उळझाय ।। ४२ ।।

नाभी स्थान मे माया आकर मुझसे आडी-आडी फिरने लगी और माया लुल-लुल कर मेरे पैर चढने लगी । कोई यदी कच्चा रहा तो उसको माया वही उलझा देती है । आगे नही जाने देती है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ४२ ।।

हम सारी बिध देख के ।। लीयो तत्त बिचार ।।
छाडी अब सुखराम के ।। माया चोपड़ सार ।। ४३ ।।

मै सभी विधी देखकर तत्त का विचार किया । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि, जैसे चौसर खेलने वाले उठ जाते है । इस प्रकार मै माया को छोड दिया । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ४३ ।।

प्राण पुरूष पकडियो ।। शिवगण लीयो हात ।।
ले नारी सुखरामजी ।। निर पख बोली बात ।। ४४ ।।

प्राण पुरूष को पकड और शिव गुण हाथ का कर लिया । लीव नारी निरपक्ष बात कहने लगी ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ४४ ।।

तीन नार नर दोय ले ।। खोली पोळ बिचाळ ।।
सुखराम दास आगे धस्या ।। थर-या तेरूं पयाळ ।। ४५ ।।

तीन स्त्रीयाँ( )और दो पुरूष इन्होने बीच का दरवाजा खोला । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज आगे बढे तब तेरहो पाताल थर-थर कांपने लगे ।। ४५ ।।

ब्रम्ह जळ मंड रूप ले ।। कोरम सेस बखाण ।।
सब धूजा सुखराम के ।। सगत सेत चहुँ खाण ।। ४६ ।।

ब्रम्ह जल से मेंढक रूप लेकर और मेढक के उपर कछुवा और कछुवा के उपर शेष बताया ये सभी,(मेंढक,कछुवा,शेष)कांपने लगे। शक्ती के साथ चारो(खाणी)कापने लगी ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ४६ ।।

दोय देश हम देखिया ।। रूम रूम सुळझाय ।।
जन सुखिया उदास होय ।। देश तीसरे जाय ।। ४७ ।।

वहाँ हमने दो देश देखा । रोम-रोम सुलझाकर देखा । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,वहाँ से उदास होकर,तीसरे देश मे गया ।। ४७ ।।

तीन पोळ में अे मिल्या ।। बिरेह मध बेराग ।।
पाँच दोय सुखराम के ।। संग आठमो भाग ।। ४८ ।।

आगे तीन दरवाजे मे विरह,मदवैराग्य मिले और पांच( )और दो( )और इनके साथ आठवां मन,भाग( )ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ४८ ।।

सात अंस कूं सोज के ।। कीया अेकण सूत ।।
अेता मिल सुखरामजी ।। ली काशी सब धूत ।। ४९ ।।

सातो अंशो को शोधकर एक सूत कर दिया । ये सभी मिलकर,सभी काशी(शरीर)को धो डाला । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । । ४९ ।।

पाँचू पिंडत हारिया ।। फिर जग जिवण ब्यास ।।
कासी सब सुखरामजी ।। छोडी बेद उपास ।। ५० ।।

वहाँ पाचो पण्डीत(पांचो ज्ञानेद्रियाँ)हार गये और जग जीवन व्यास( ),यह भी हार गया और सभी काशी के लोगो ने वेदों की उपासना छोड दी । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । । ५० ।।

धुन अेको सब स्हेर में ।। रंरकार की होय ।।
सुरगुण मे सुखराम के ।। निरगुण पायो जोय ।। ५१ ।।

सभी शहर मे(शरीर मे)एक ध्वनी हो गयी । यह ध्वनी ररंकार की हुयी ।(पूरे शरीर मे ररंकार की ध्वनी हो गयी ।)सगुण(शरीर)मे निर्गुण(शब्द,ब्रम्ह ध्वनी)मिली,उसे देख लिया ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।५१।।

अमल जमायो सहेर मे ।। रंरकार को राज ।।
कासी में सुखरामजी ।। व्हे अणभे धुन गाज ।। ५२ ।।

इस शहर मे(शरीर मे)ररंकार शब्द ने,अपना अधिपत्य जमा कर,अपना राज्य स्थापीत कर दिया । काशी(शरीर मे)अणभे( )ध्वनी की गर्जना होने लगी ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।५२।।

जमना काँठे लोक सो ।। बेठा आसण मार ।।
कासी तज सुखरामजी ।। ले गंगा की धार ।। ५३ ।।

यमुना(इडा नारी)के किनारे पर,सभी लोग आसन मार कर बैठ गये । काशी( )छोडकर गंगा की धारा,बहने लगी ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ५३ ।।

ज्याँसुं जमणा उत्तरे ।। गंगा फेर बखाण ।।
आ सुधले सुखरामजी ।। बेठा न्हावे आण ।। ५४ ।।

जहाँ से यमुना(बायां स्वर)उतरता है और गंगा(दाहिना स्वर)भी उतरता इसकी समझ लेकर इस गंगा,यमुना(इडा,पिगडा)मे बैठकर स्नान करती है,(ध्यान करती है)ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।५४।।

मरत लोक मे बे रही ।। ज्यां हम देखी आय ।।
घाट घाट सब धाम में ।। न्हाया बोहो बिध मांय ।। ५५ ।।

इस मृत्यु लोक मे जो बह रही है,वह(गंगा,यमुना)वहाँ जाकर मैने देखा । वह शरीर मे ही दिखने लगी । उसके घाट-घाट पर जाकर सभी धामो मे अनेको प्रकार से स्नान किया । (ध्यान किया) ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ५५ ।।

अेक घाट पर मानवी ।। पेड़ी सोळे बखाण ।।
सरब रस सुखरामजी ।। न्हायर पीया जाण ।। ५६ ।।

एक घाट पर सोलह सिढीयाँ है उस पर मनुष्य(मन)बैठा वहाँ सभी रस(स्वाद)(ध्यान कर के) पिया ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ५६ ।।

दूजो धाम जवारियो ।। ज्याँ जोगी सिन्यास ।।
पेड़या सुण सुखराम के ।। द्वादश परशो बास ।। ५७ ।।

वहाँ से दूसरे धाम मे जाकर पूछा । वहाँ योगी(योग साधने वाले)सन्यासी,बारह सीढीयों का वास,स्थान जाकर परसा । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ५७ ।।

बीचे घाट अनेक हे ।। ज्याँ त्याँ न्हावे लोय ।।
सुखराम दास वे धाम रे ।। साधु परसे कोय ।। ५८ ।।

उसके बीच मे और भी अनेक घाट है । उन घाटों पर जहाँ-वहाँ लोग स्नान करते है । (ध्यान करते है),आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,उस धाम पर कोई विरलै साधू ही जाकर परसता है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ५८ ।।

तीजे धाम पधारिया ।। ज्याँ गंगा कुंड होय ।।
सात दीप नव खंड में ।। चली चहुँ दिस जोय ।। ५९ ।।

वहाँ से तीसरे धाम मे गया । वहाँ गंगा कुण्ड है । वहाँ से सातो द्विप और नव खण्डो मे(सब शरीर मे ही),चारो दिशाओं को देखकर चला ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ५९ ।।

मरत लोक में बेह रही ।। जाणे बेद कुराण ।।
नो खंड बीचे आठ हे ।। जमना गंग बखाण ।। ६० ।।

इस मृत्यु लोक मे बह रही उस(गंगा,यमुना)को सभी वेद और कुराण जानते है इस नव खण्ड पृथ्वी मे आठ(नौ सौ नाडीयों मे आठ)गंगा और यमुना है,ऐसा बोलता हूँ ।। ६० ।।

चार गंग में दीप सो ।। न्हावे तां नर लोय ।।
सुखराम पाँचवी गंगरे ।। जाणे साधु कोय ।। ६१ ।।

इन चार गंगा मे द्विप है,उसमे सभी लोग(मनुष्य)स्नान करते है परंतु आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि ,पांचवी गंगा को कोई एक साधू ही जानता है ।। ६१ ।।

ज्याँ चाले असमान कूं ।। उलटी फिर वहाँ जाय ।।
सुखराम धार जाहाँ सुं पड़े ।। गंगा कुंड के मांय ।। ६२ ।।

जहाँ से उलट कर बंकनाल के रास्ते,आकाश मे चढा जाता है आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,यहा धारा(शब्द की ध्वनी)उपर जाकर गंगा कुण्ड(पिंगला नाडी मे)पडती है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।६२।।

उण धारा का अंस सो ।। चार गंग मे होय ।।
फिर माहि सुखराम के ।। बो जळ भिलीयो जोय ।। ६३ ।।

उस धारा का अंश(ध्वनी का),चारो गंगा मे होकर जाता है और उसमे बहुत पानी आकर मिला हुआ दिखा ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ६३ ।।

सो हम चारूं परश ली ।। तीरथ किया अनेक ।।
सात दीप पाताळ का ।। सुखिया भिन भिन पेख ।। ६४ ।।

वह हम चारो गंगा मे जाकर परसा और अनेक तीर्थ किए । सात द्वीप और पाताल को अलग-अलग कर के देखा ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ६४ ।।

सब जोया सब परसिया ।। सारा जुग को खेल ।।
उण गंगा के घाट पर ।। सुखिया सातुं पेल ।। ६५ ।।

सभी परसा और सभी देखा । इस सारे संसार का खेल(शरीर मे ही देख लिया ।)उस गंगा के घाट पर सातो पेल पलटकर बैठ गये ।। ६५ ।।

जोगी जंगम सेवड़ा ।। षट दरसण सब लोय ।।
ओ घाटो सुखराम के ।। बिरळा परसे कोय ।। ६६ ।।

योगी,जंगम,शेवडे,छःवो दर्शन और सभी लोग,इनमे से इस घाट को कोई विरला ही जाकर परसता है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ६६ ।।

पिंडत तो जाणे नहीं ।। जोगी पावे नाय ।।
आ गंगा सुखराम के ।। उलटर वाहाँ घर जाय ।। ६७ ।।

पंडीत तो इसको जानता ही नही और यह योगी को भी मिलता नही । यह गंगा(ध्वनी)तो उलटकर बंकनाल के रास्ते से होकर उस घर को जाती है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ६७ ।।

हम सारा सब सोजिया || तीरथ धाम मुकाम ||
माया अंग सुखराम के || आतम परसण राम || ६८ ||

मै सब कुछ शोध किया । इस शरीर मे ही सभी तीर्थ,सभी धाम और ठिकाण है यह मैने खोज लिया । ये माया के स्वाभाव है और मेरी आत्मा तो राम को परसना चाहती है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।६८ ।।

मेरा मन माने नहीं || चंचळ हुवा उदास ||
अे सब ऊला धाम हे || नेहेचल ले सत्त बास || ६९ ||

इस माया से मेरा मन खुश होता नही । यह मेरा मन इस माया के योग से चंचल होकर उदास हो गया । ये जो दिखे सब,इधर के धाम ठिकाण है तो इस इधर के सब धामों को छोडकर निश्चल जो नाश न होनेवाला सत्त वास है उस वास को जाकर लो ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || ६९ ||

पुरब का सब छाड़ के || खोली पिछम पोळ ||
आतर सूं सुखराम के || घाली सुर पुर रोळ || ७० ||

पूरब के संखनाल का रास्ता छोडकर,पश्चिम का(बंकनाल का)दरवाजा खोला । जिज्ञासा वश देवताओं की पुरी मे जाकर मैने धूम मचाई ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।७०।

मन निज मन बेराग रे || सुरत निरत ले नार ||
चोथी सुण सुखराम के || ब्रेहन करे पुकार || ७१ ||

मेरा मन निजमन तथा वैराग्य और मेरी सूरत निरत तथा लय(नाद)इन तीन स्त्रीयोने और चौथी विरह आकर पुकार करने लगी ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।७१।।

अे सांतु ले उलटिया || तोड़या अब घट घाट ||
तब सूझी सुखराम के || पिछम सुर की बाट || ७२ ||

इन सातों(मन व निजमन वैराग्य और सूरत, निरत व लय और विरह)ने प्राण को लेकर उलटी हो गयी और इन्होने बहुत ही बडे–बडे अवघड घाट तोडे तब पश्चिम की सुर की वाट दिखाई देने लगी ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || ७२ ||

यां चोकी गण देव की || सुध बुध सुमती बात ||
साताँ संग सुखरामजी || अे पण कीया साथ || ७३ ||

यहाँ गुदाघाट पर गणेश की चौकी है । सुध बुध इस सुमती की बात है । सातों के साथ, ये भी हो गये ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || ७३ ||

सब का चित्त मन अेक हुवा || जग्या भाग मल सूर ||
पिछम दिस सुखराम के || बागा अनहद तूर || ७४ ||

इन सबका चित्त और मन एक हो गया । उसके योग से भागमल(भाग्य)रूपी सुर्य जागृत हुआ और पश्चिम दिशा मे(बंकनाल के रास्ते से मेरू दण्ड मे)अनहद सुर बजने लगे ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ७४ ।।

थरच्यो सब लोक ब्हो ।। जे जे परबत माय ।।
कर जोड़े सुखरामजी ।। सनमुख सारा आय ।। ७५ ।।

तब सभी देवों के लोक थरथराने लगे। पर्वत पर(मेरू दण्ड मे),मेरी जय-जय कार करने लगे। वहाँ के सभी देव मेरे सामने आकर मुझे हाथ जोडने लगे ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।। ७५ ।।

जो परबत धर माय थो ।। तां मे पुरियाँ होय ।।
सो सारा सुखराम के ।। परसण पूजे लोय ।। ७६ ।।

जमीन पर मेरु परबत मे सभी देवताओं की पुरीया है ।(पीठ के इक्कीस मणियो मे, देवताओं की अलग-अलग इक्कीस पुरीया है ।)वे सभी देव आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि वे सब प्रसन्न होकर मेरी पूजा करने लगे ।। ७६ ।।

इत कूं गंगा खळ हळे ।। इत जमना बेहे पूर ।।
तां बीचे सुखरामजी ।। चाले हरजन सूर ।। ७७ ।।

इधर दाहीनी तरफ गंगा खल-खल आवाज करती हुयी बह रही है और उधर(बायी तरफ से यमुना बाढ जैसी बह रही है । इन गंगा-यमुना की बाढ के बीच मे कोई शूरवीर हरीजन होगा वही चलेगा ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ७७ ।।

बीचे बोहो पुरियाँ घणी ।। सुर देवा का लोक ।।
डेकावे सुखराम के ।। जाणण देवे मोख ।। ७८ ।।

इनके बीच मे अनेक और भी पुरीयाँ है और बीच मे देवताओं का लोक है । वे सभी देवता इधर से मोक्ष मे जाने वाले संतो को बहका देते है,मोक्ष मे जाने नही देते है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ७८ ।।

घर घर अटके देव सो ।। लोक पुरी के माय ।।
सुख दुख दे सुखरामजी ।। जिण जिण पुरियां जाय ।। ७९ ।।

उस पुरीयों के देवता अपने-अपने घर मे मोक्ष जाने वाले संतो को अटकाते है और लोक-लोक मे,पुरी-पुरी मे,देव संतो को रोकते है। वहाँ के देवता मोक्ष जाने वाले संतो को कभी भी सुख देते है और कभी भी दु:ख देते है। जिस-जिस पुरी मे वे संत जाते है,वहाँ के देव संतो को सुख और दु:ख देते है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ७९ ।।

उलटा जन कूं बस करे ।। राख्यो चावे माय ।।
आ बिध हे सुर लोक में ।। हम देखी हे जाय ।। ८० ।।

उन पुरीयों के देव मुझे उलटे वश मे करना चाहते और मुझे अपनी-अपनी पुरीयो मे रखना चाहते है। यह विधी देवताओं के लोक की है वह उन की विधी मैने जाकर देखी ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || ८० ||

मत मानो सुर लोक की || जे जन मेरा होय ||
सुख दुख सूं डेह को मती || आराधो अंक दोय || ८१ ||

आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,इन देवताओं के लोक मे देवताओं की बात कोई मानो मत । जो मेरे जन है वे इन देवताओं की बात सुनो मत । उन देवताओं के दिये हुए सुख और दु:ख पर,कोई बहको मत । सिर्फ दो अंक रा' और म' यानी राम नामकी आरधना करो ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || ८१ ||

जे थोडी सी मान के || हरजन देवे कान ||
तो दिसे सुखरामजी || लीला बोहो बिध आण || ८२ ||

यदी कोई हरीजन इन देवताओं की थोडीसी भी बात मानकर देवताओं की बात सुनने पर कान देगा तो उसे अनेको प्रकार की लिलाये(देखने जैसे खेल-तमाशा,देवताओं के चरीत्र)दिखने लगेगी ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || ८२ ||

देव लोक सो देखिया || सब के सेत बिवाण ||
आद जाग सुखराम के || परबत माय बखाण || ८३ ||

देव लोक मैने सब देखा। उन सब देवताओं के विमान सफेद रंग के है । इन सब देवताओं का आदी स्थान मेरु पर्वत मे(मेरू दण्ड)मे है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || ८३ ||

ज्हाँ होय गेलो संत को || घेरे सुर अस्थान ||
जब सारा सुखरामजी || सेज मिले घर आण || ८४ ||

जिस देवताओं के स्थान पर संत जाते है,तब वहाँ के देव देवताओं के स्थान पर संतो को घेरते है । जब सभी देव आसानी से,अपने आप घर जाकर मिलते है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || ८४ ||

सुर तेती सुं क्रोड हे || दाणुं बोहोत बखाण ||
सब बसे सुखराम के || ज्याँ सब का घर जाण || ८५ ||

ये देव तैतीस कोटी है और दानव तो बहुत ही है । ये सभी देव और दानव वहाँ रहते है । उन सबका वहाँ घर है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || ८५ ||

जम चवदे मोठा सही || क्रोड क्रोड उण लार ||
सब बसे सुखराम के || जहाँ धरम दरबार || ८६ ||

चौदह यम बडे है । एक-एक यम के पास सौ लाख यानी एक-एक करोड यमदूतों की फौज है । चौदह करोड यमदूतों के चौदह मालिक है वे सब ही धर्मराय के दरबार मे रहते

है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ८६ ।।

ओर उपाया क्रोड ले ।। कर देखी सब कोय ।।
जम दाणो सुखराम के ।। बस नहिं हूवे जोय ।। ८७ ।।

मैने और भी करोडो उपाय कर लिये,मैने सब उपाय करके देखा,ये यम और दानव दुसरे किसी भी उपाय से कोई भी वश मे होते नही है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।। ८७ ।।

अेके कूं ग्रेह घेरियो ।। दूजो निकसर जाय ।।
मूळ बिना सुखरामजी ।। पच पच मरे बलाय ।। ८८ ।।

एक को मै घेरता हूँ तो दूसरा निकल जाता है । मूल के बिना प्रयत्न कर–कर के मै थक गया ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ८८ ।।

हम किमत कळ देखली ।। सब का घर अस्तान ।।
दूजा बस हुवे सुखरामजी ।। सब अेके घर आण ।। ८९ ।।

मैने हिकमत से सभी(देवताओं और दानवों की)कला देखी और घर और स्थान भी देख लिये। ये सब ही,एक ही घर मे आकर,वश मे होते है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।। ८९ ।।

पाँच पची सुं चार ले ।। इत उत न्हाटा जाय ।।
सब बस व्हे सुखरामजी ।। बंक नाळ में आय ।। ९० ।।

पाँच(इंद्रियाँ)पच्चीस(प्रकृती)और चार(मन,बुद्धि,चित्त,अहंकार)ये इधर और उधर भागते है। ये सब बंकनाल मे आकर वश मे हो जाते है। ये बंकनाल मे आ गयी तो उनसे इधर–उधर जाया नही जाता ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ९० ।।

सबका जूं घर मेर मे ।। जित सुरज उदियाय ।।
चहुँ दिस जुग में खेल हे ।। ने चळ उण घर मांय ।। ९१ ।।

इन सबका घर मेरू मे है । जहाँ से सूर्य उदित होता है वही उनका घर है । ये संसार मे चारो दिशाओं मे खेलते है परन्तु ये उस घर मे निश्चल हो जाते है इधर–उधर नही भागते ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।९१।।

जित सूरज ऊगे सदा ।। पिछम सरस बखाण ।।
आ साखी सुखराम के ।। अर्था सुलटी जाण ।। ९२ ।।

जहाँ से सूर्य नित्य उदित होता है और पश्चिम मे सरस बखाण । इस साखी का अर्थ उलटा जानो ।। ९२ ।।

जब पायो हम देस ओ ।। मेर मूळ मुलतान ।।
सुरपुर नरपुर नागपुर ।। फिन्यो सकळ जुग आन ।। ९३ ।।

जब यह देश मुझे मिला । मेरू मे मुल मिला । मुलतान देवताओं का लोक है । देवों का

लोक, मृत्यु लोक और पाताल लोक मे याने सभी संसार मे मै फिरा ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ९३ ।।

सब सुर देख्या अेकटा ।। इन्द लोक में आय ।।
गण गंद्रप गावे घणा ।। बोहो सुर राग बजाय ।। ९४ ।।

ये सभी देवता मैने,इंद्र लोक मे आकर इकठ्ठे हुए देखा । मै इंद्र लोक आया,तो इंद्र लोक मे सभी देवता,एक ही जगह पर इकठ्ठे हुए देखा । इंद्र ये तैतीस करोङ देवताओं का राजा है । वहाँ सभी देव जमा होते है । वहाँ इंद्र लोक मे गण और गन्धर्व बहुत ही है,वे अनेको प्रकार की राग–रागिणी,अनेको प्रकार के सुर बाजाओं से निकालते है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ९४ ।।

नाचे खेले कमकमे ।। तरसावे बोहो रीत ।।
इंद्र लोक सुखराम के ।। घणा दिन आसी चीत ।। ९५ ।।

वहाँ ये गन्धर्व और गण नाचते है और खेल खेलते है और कम कमे( ),(यहाँ से जाने वाले संतो को,अनेक तरह से तरसाते है आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि यह इंद्र लोक मुझे बहुत दिनो तक याद रहेगा ।। ९५ ।।

देव लोक में दुख घणो ।। ज्याँ आद असतान ।।
सुखिया युँ सब जाण के ।। धऱ्यो ब्रम्ह को ध्यान ।। ९६ ।।

इन देवताओं के लोक मे अनेक दुख है,जहाँ इन देवताओं का आदी स्थान है । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि मै यह सब जानकर सतस्वरुप ब्रम्ह का ध्यान पकङा ।।९६।।

हम या में फिरिया सही ।। सरब लोक सुर राय ।।
नहि मानी सुखरामजी ।। अेक सूं दूजी जाय ।। ९७ ।।

मै इनमे घूमा तो सही इनके पूरे लोक मे घूमा और सूराय याने इंद्र लोक इनमे भी मै घूमा परन्तु एक सतस्वरुप ब्रम्ह ध्यान के अलावा दूसरी इनकी एक भी बात नही मानी ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।९७।।

कर जोडे. अे बीण वे ।। अेक पग के पाण ।।
देव लोक सुखरामजी ।। हाजर चड़ी कबाण ।। ९८ ।।

ये सभी देवता और इंद्र मेरे सामने हाथ जोङ कर मेरी बिनती करने लगे । इस देव लोक के सभी देवता उपस्थित हुए जैसे कबाण याने तनी हुयी धनुष के जैसा वर्तुलाकार आकार खङे हो गये । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ९८ ।।

अेक तमासो उण लोक में ।। सुणज्यो सब जन लोय ।।
ताव पड़े सुर लोक में ।। चडण न देवे कोय ।। ९९ ।।

और भी इस लोक का एक तमाशा है तो सभी संत और मनुष्य सुनो । उस देव के लोक

मे ताप पडता है,वे देव अपने उपर के देश मे चढने नही देते,(देवताओं के उपर जाना,देवताओं को सहन नही होता),इसलिए वे उपर न जाने देने से,अपने ही लोक मे रखते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ९९ ।।

वाँ सत्तगुर का बेण सो ।। लीया सुरत समाळ ।।
इत हम कूं सत्तगुर कहयो ।। सुखिया सुरपुर काळ ।। १०० ।।

उस जगह पर मैने राम स्मरण करनेका सतगुरू का ग्यान,सूरत से सम्हाल कर रखा । यहाँ मुझे सतगुरूने कहा था कि अरे सुखरामा,हे सुर-पूर काल है । देव लोक के देवता उपर जानेवालो के लिए काल है इसलिये इनके खेल तमाशो मे या इनसे बातों मे भूल मत । इस प्रकार मुझे सतगुरूने पहले ही कहा था ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।१००।।

ज्याँहा हम ग्यान संभाळियो ।। निज मन कियो बिचार ।।
इण जागा सुखरामजी ।। बोहो जन चाल्या हार ।। १०१ ।।

देवताओं के लोक मे मैने सतगुरू के ज्ञान की याद की और सतगुरू के ज्ञान का निजमन से विचार किया,कि इस जगह से अनेको जन(संत),हारकर वापस लौट गये है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।१०१।।

सुखदेव सा पाछा पड़या ।। सो सुणियो असतान ।।
सुखिया सत्तगुरू याद कर ।। तब देवे अे जान ।। १०२ ।।

जिस जगह से सुखदेव बाद्रायणी जैसे वापीस लौट गये वह स्थान यह है ऐसा मैने सुना । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,जब सतगुरू की याद करोगे,तभी ये आगे जाने देते । ।। १०२ ।।

सातुं जोधा संग ले ।। तीन अगाऊ राख ।।
परवानो सुखरामजी ।। निस दिन आ गळ भाख ।। १०३ ।।

सात योद्धा साथ मे लेकर,तीन योद्धा आगे रखे और सद्गुरू के दिया ज्ञान यह परवाना रात-दिन आगे की बात कहने लगा ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले।१०३।

देव लोक में चालणो ।। खरा खरी को काम ।।
जन सुखिया इंदर डरे ।। सुरग लोक सब धाम ।। १०४ ।।

इन देवताओं के लोक मे चलना बहुत ही कठिनाई का काम है । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि मुझसे इंद्र भी डरता है और सभी देव लोक के सभी धामों के सब देवता मुझसे डरते है । ।। १०४ ।।

डरता भेजे मोगणी ।। पाँच बाण दे हात ।।
कळ किमत सुखराम के ।। सब पाड़ण की बात ।। १०५ ।।

मेरे से डरकर इंद्र,अपनी अप्सरा उसके हाथो पाँच बाण देकर भेजा । इंद्र और देवताओं

की कला और हिकमत मुझे वापस लौटाने की ही है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १०५ ।।

सुरग लोक हम देखियो ।। दगा बाज सब होय ।।
सब घाटा सुखराम क्हे ।। बोहो बिध बांध्या जोय ।। १०६ ।।

मैने सम्पूर्ण स्वर्ग लोक देखा । वहाँ सभी लोग दगाबाज है ये देवता आगे जाने वालों को अनेक अवरोध उत्पन्न करते है । यह मैने देखे ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।१०६।

जन कूं रोके बीच मे ।। चड़ण न देवे ठोड़ ।।
सुरग लोक सुखराम क्हे ।। दे नित पाछो मोड़ ।। १०७ ।।

ये सभी देवता मुझे बीच मे ही रोकना चाहते और मुझे आगे के स्थान पर चढने नही देते । ये स्वर्ग के देवता मुझे नित्य-प्रती वापस लौटाना ही चाहते है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १०७ ।।

घणा घणी जो बळ करूं ।। जुंझू लिव संग लेह ।।
सुरग लोक सुखराम के ।। तो ही जाण न देह ।। १०८ ।।

मै बहुत जोर करता हूँ और उनसे जूझता हूँ । लव(राम नामकी धुन का नाद)लगाकर राम शब्द साथ मे लेकर जूझता हूँ लडता हूँ(जैसे तलवार से लडते है,उसी प्रकार मै लव लेकर लडता हूँ । तो भी ये देव मुझे स्वर्ग से आगे जाने नही देते ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १०८ ।।

परथम पाड़े अवस कर ।। तिणमे फेर न सार ।।
देव लोक सुखराम के ।। हम देख्यो जुंझार ।। १०९ ।।

पहले तो यह अवश्य पिछे वापस ढ्केल देते है । इनके ढ्केलनेमे फेरफार नही । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,यह देव लोकमे सबही देव मैने देखे,की वो बडे लढ्वय्ये है ।१०९।

सुरग इकी सुं देखिया ।। सब की आ बिध रीत ।।
सुखिया गेले बीच मे ।। सुख दुख आसी चीत ।। ११० ।।

मैने सभी इक्कीस स्वर्ग देखे । इन सब की यही विधी और रीती है,आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,इनके रास्तों के बीच,मुझे दिए गये सुख और दु:ख याद रहेगे ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ११० ।।

पुरियाँ सबे सुमेर में ।। इण उणियारे होय ।।
सुखिया इंडो ढेल को ।। चोपड़ पासो जोय ।। १११ ।।

इन देवताओं की पुरीयाँ सुमेर पर्वत मे(अपनी पीठ की मनको मे है ।)इन पुरीयोका स्वरूप मोरके अण्डे जैसा या चौसरी के नरदो जैसा दिखा ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी

महाराज बोले । ।। १११ ।।

सोळे बड़ा बिवाण हे ।। तिण में आठ बखाण ।।
जन सुखिया वे देवतां ।। फिरे सकळ जुग आण ।। ११२ ।।

इन देवताओं के बडे सोलह विमान है । इन सोलह विमान मे आठ बहुत ही बडे है । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,ये सभी देवता अपने–अपने विमान मे बैठकर पूरे संसार का भ्रमण करते है ।। ११२ ।।

पुरियां सबे सुमेर में ।। हम सब देखी जाय ।।
जन सुखिया जग में फिरे ।। सबे बिवाणा मांय ।। ११३ ।।

इनकी पुरीयाँ सभी सुमेर पर्वत पर है,उस पुरीयोको मैने सभी तरहसे जाकर देखा । देवलोक के सभी देव अपने अपने विमान मे बैठकर संसार मे फिरते है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ११३ ।।

ब्रम्हा इंद्र महेस का ।। बिसन सगत सिव सूर ।।
इनका बड़ा बिवाण हे ।। प्रीतम का बोहो नूर ।। ११४ ।।

ब्रम्हा,विष्णु,महेश व शक्ती इन सब देवताओं के विमान बडे है। ये विमान प्यारे और बोहोनूर याने तेजवान है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ११४ ।।

काम देव गणपत रे ।। गवर सुरसत्ति होय ।।
सब देवत सुखराम के ।। बिना बिवाण न कोय ।। ११५ ।।

कामदेव,गौरी,गणपती,पार्वती,सरस्वती इनके भी विमान है । ये सभी देव इनमे से,कोई भी बिना विमान का नही है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ११५ ।।

वाँ ब्रम्हा के हंस हे ।। याँ कहिये सो हात ।।
जन सुखिया खंड पिंड की ।। सारी अेको बात ।। ११६ ।।

वहाँ ब्रम्हा का विमान हंस है। तो यहाँ हाथ है । इस प्रकार खण्ड की और पिण्ड की सभी बाते एक ही है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ११६ ।।

हम काया सब थूंथ हे ।। देख्या तीनुं लोक ।।
सुरग नरग सुखराम के ।। इस बिध सारा थोक ।। ११७ ।।

मै सम्पूर्ण शरीर का शोध करके तीनो लोक देखा । वहाँ के स्वर्ग,नर्क तथा सभी लोक तथा वहाँ की प्रत्येक वस्तू देखी । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।११७।।

खंबाँ बिसन ससि सूर के ।। घ्राण सगत के सास ।।
इन्दर के सुखरामजी ।। पाव अगुंठे बास ।। ११८ ।।

खवा(कन्धा)विष्णु का विमान(गरूड)है और नाक चंद्रमा का विमान(हिरण)है और सुर्य का विमान सात मुंह का घोडा है और शक्ती का विमान सिंह वह नाक की श्वास है और इंद्र का विमान(ऐरावत)पैरो के अंगूठे मे रहता है ।।११८ ।।

शंकर के चख नेण हे ।। कतर स्याम मुख होय ।।
बिवाण कहया सुखरामजी ।। काया मध सब जोय ।। ११९ ।।

शंकर का विमान(नन्दी)आँख है। और कार्तिक स्वामी का विमान मोर(मुँह)है,ये सभी विमान मैने जो बोले,वे सभी विमान इस शरीर मे ही देखकर बोला,ब्रम्हाण्ड की रचना पिण्ड मे देखकर कहा । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ११९ ।।

कवत्त ।।

ब्रम्हा बाहण हंस ।। बिसन के खग कहीजे ।।
चंद सूर के घ्राण ।। मृघ वाहण लहीजे ।।
ईस नांदियो नेण ।। सगत सिंग सास बखाणो ।।
कतर स्याम मुख मोर ।। इंद्र कानाँ कुंजर ठाणो ।।
सब देवत के बिवाण हे ।। देवा आगे लीन ।।
सुखराम दास काया मधे ।। लिया बिवाण सब चीन ।। १२० ।।

ब्रम्ह का विमान हंस,विष्णु का गरूङ;चंद्रमा का हिरण,सुर्य का विमान सात मुंह का घोङा (यानी बायी नाक की श्वास मे चंद्र चलता है और दाहीनी नाक की श्वासमे सूर्य चलता है ।)इस प्रकार सूर्य का और चन्द्रमा दोनो का ही विमान नाक है और महादेव का विमान नंदी यह आँख है और शक्ती का विमान सिंह यह स्वांस है और कार्तिक स्वामी का विमान मोर यह मुँह है। इस प्रकार से सभी देवताओं का विमान है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि इंद्र का विमान कान(कुंजर)ऐरावत है । और ये विमान देवताओं के आगे लीन हुए है ये सभी विमान मैने काया(शरीर)मे ही खोजे है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले।।। १२० ।।

साखी ।।

सब देवत के बिवाण हे ।। काया में सुर धाम ।।
सब देख्या सुखरामजी ।। मुख शिवरण कर राम ।। १२१ ।।

इन सभी देवताओं को विमान है और इन सभी देवताओं का रहने का धाम है वे सभी इस शरीर मे ही है,आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,ये सभी मैने मुंह से राम नामका स्मरण करके देखा है ।। १२१ ।।

पुरब सोजी पयाँळ कूं ।। पिछम सुर नो देस ।।
धामा बिच सुखरामजी ।। न्यारा वे नर बेस ।। १२२ ।।

पूरब भी सभी शोध कर देखा,पाताल भी सब शोध कर देखा और पश्चिम के देवताओं का लोक भी देखे। अपने-अपने रहने के स्थानो के बीच मे,न्यारे-न्यारे मनुष्य रहते है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १२२ ।।

सुरग इकीसूं देखिया ।। सब के जम दूत ।।
हम आया उण देस में ।। झूटा दरसे पूत ।। १२३ ।।

ये सभी इक्कीस स्वर्ग मैने देखे। इन सबके मस्तक पर यमदूत है। मै जब उस देश मे आया तो मुझे ये सभी देवता खोटे(नाशवान)दिखाई देने लगे ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १२३ ।।

तीन लोक कूं घेरियो ।। सब कूं कीया जेर ।।
मेर घाट सुखरामजी ।। अेसो दुलभ न फेर ।। १२४ ।।

इन यमदूतों ने तीनो लोकों का घेरा बन्दी कर,जेर कर दिया है,आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,इस मेरू घाट के जैसा अधिक दुर्लभ कठिण कुछ भी नही है ।१२४।

तकड़ बंध गाढा करे ।। देवे बोहो शिर मार ।।
उण आगे सुखराम के ।। सब जुग चाल्यो हार ।। १२५ ।।

ये यमदूत मजबूत(तकड्वबंद)बाँध बांधते है और मस्तक पर बहुत ही मार मारते है। इन यमदूतोंके आगे सम्पूर्ण संसार हार जाता है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।। १२५ ।।

दूजा की मै क्या कहुँ ।। मेरी करूं पुकार ।।
मेर माय सुखराम के ।। सत्तगुर जाण ज हार ।। १२६ ।।

दूसरो की तो मै क्या कहूँ मै अपनी ही पुकार कहता हूँ कि मेरू मे आदि सतगुरू सुखरामजी.महाराज कहते है की सतगुरू ही जानने वाले है ।। १२६ ।।

अेसा दर्से जोर सो ।। तेज खियो नहिं जाय ।।
मन पूठा सुखरामजी ।। उण घर चडे न आय ।। १२७ ।।

यमदूतों की भारी ताकत दिखती है। उन यमों का तेज सहन नही होता है। मन आगे जाने के लिए तयार होता नही ये मन से उस घर पे चढा जाता नही है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।१२७ ।।

पाछा आवे टेल के ।। सुरग लोक के मांय ।।
जम छाया सुखरामजी ।। मो से सही न जाय ।। १२८ ।।

यह मन मेरू से पलटकर स्वर्ग लोक मे आ जाता है । यम लोक मे मेरू से जाने मे डरता है ,इसलिए लौटकर पुन: स्वर्ग लोक मे आ जाता है । उस यम की छाया भी मुझसे सहन नही होती है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १२८ ।।

सनमुख क्यों कर सेहेत हे ।। जम जालम के घाट ।।
हम राहा डांडी पीठ में ।। सिर ऊपर कर बाट ।। १२९ ।।

मुझसे उसकी छाया भी बर्दास्त नही हुयी,ऐसे यम दूत को दूसरे मनुष्य,सामने कैसे सहन करते है वह यम बहुत ही जालीम है,उसका घाट भी बिकट है,उसे दूसरे लोक (मनुष्य)सामने कैसे सहन करते है । मैने मेरा रास्ता पीठ के तरफ से यमराज के मस्तक पर होकर निकाला ।। १२९ ।।

वा मै तेज करूर रहे || जम राय के माय ||
सुखराम दास के सूरवां || सो शिर पर होय जाय || १३० ||

उस यम का तेज बहुत ही कडक है,आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि,जो शूरवीर संत है वे ही यमराज के सिर पर पैर देकर(यमराज के मस्तक की सीढी बनाकर) ,आगे जाते है । || १३० ||

बडो अचंबो अेक ओ || पाय पडे सब कोय ||
जम दाणुं सुखराम के || हरजन पे बस होय || १३१ ||

मुझे यह एक बहुत ही बडा,अचंबा होता है,वे सभी(बडे चौदह यमराज),सभी के सभी मेरे पैर पडते थे । वे यम और दानव सभी मेरे वश मे हो गये ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || १३१ ||

धूजे निपट निराट सो || बोहो दरसण की चाय ||
तोइ जम छाया सुखराम के || मो पे सही न जाय || १३२ ||

वे यमराज और उनके दूत मुझसे बहुत ही डरते है और कापते है और वे मेरे दर्शन की बहुत ही चाहना रखते है । इतने मेरे आधीन हुए है,तो भी यम की छाया मुझसे सहन होती नही है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || १३२ ||

देख्या जम असतूळ सो || बोहोत करा रो काम ||
बंध लागे सुखरामजी || चिसकन दे उण धाम || १३३ ||

मैने उस यमदूत का स्थूल शरीर देखा । उनका बडा ही कठिण काम है । उनका बंध लगा तो वे इधर-उधर जाने नही देते । हिलने नही देते,ऐसा उस धाम मे है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || १३३ ||

आगो पाछो सोज के || नख चख सकळ सरीर ||
मेर जम असतान में || चिगण न पावे बीर || १३४ ||

वहाँ यम लोक मे जीवों की आगे-पीछे,सब की खोज की जाती है ।(चित्रगुप्त)यह जीवों के शरीर पर उनके कर्मो के प्रमाण से,निशाणी कर देता है,चित्र यह प्रगट रूप से किये गये कृत्यों की निशाणी शरीर के उपर प्रगट कर देता है और गुप्त यह गुप्त रूप से किए गये कृत्यो की निशाणी शरीर के अन्दर निशाण लगा देता है । यम लोक मे जीव के जाने पर उसके आगे-पीछे खोज कर,उसके उपर चित्र और गुप्त के किए निशाण देखकर उसके किए कर्मो के हिसाब से उसे भोग-भोगने को लगाते है । इस प्रकार जीव के नख से आंखो तक पूरा शरीर आगे-पीछे,खोज कर लेते है । मेरू मे यम के स्थान मे जीव को इधर-उधर नही करते आता । || १३४ ||

मन बुध चित बेराग जूं || हाजर व्हे उण धाम ||
तो जीते सुखरामजी || जम जालम का गाम || १३५ ||

उस यम के लोक मे मन,बुद्धि,चित्त व वैराग्य,ये प्राणी के पास हाजीर हुए तो यम के धाम मे जीव की जीत होती है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १३५ ।।

सुध बुध मनछा मांन ले ।। सब हाजर अे होय ।।
जम मेर अस्तान में ।। चिगण न पावे कोय ।। १३६ ।।

सुध(समझ)बुद्धि,मनषा मान लेकर,ये सभी आकर वहाँ हाजीर हुए । मेरू मे यम के स्थान पर, कोई भी थोडासा भी,हिल-डुल नही सकता ।) ।। १३६ ।।

अेसा ग्रेहे काठा करे ।। हाथ पाव सब देह ।।
मुख जीभ्या सुखरामजी ।। भोजन भजन न लेह ।। १३७ ।।

ये यम के दुत मुँह और जीभ इनको भी मजबूत बांधते है,उस योग से भोजन या भजन नही हो सकता ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १३७ ।।

चलण न देवे पेंड भर ।। इत उत मुडयो न जाय ।।
अेसो दुख सुखराम के ।। जम लोक के मांय ।। १३८ ।।

वे यमदूत ऐसा मजबूत बांधते है,कि जीव को एक पग भी चलने नही देते और जीव से इधर या उधर भी घूमा नही जाता । ऐसा दु:ख उस यम लोक मे है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १३८ ।।

आगो पीछो सोज ले ।। साच झूट अेनाण ।।
जम घर मे सुखराम के ।। सब करणी का छांण ।। १३९ ।।

वहाँ यम लोक मे आगे-पीछे सभी की खोज कर लेते है । खरे और खोटे सब निशाण देख लेते है । उस यम के घर मे सभी जीवो की,की हुयी करणी की छान होती है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १३९ ।।

काचा पाका परख हे ।। मेर डंड के मांय ।।
जम लोक सुखरामजी ।। बिरळा जीत्यो जाय ।। १४० ।।

इस मेरू दण्ड में कच्चे और पक्के की परीक्षा होती है । इस यम लोक को कोई विरला संत ही जीत सकता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १४० ।।

तड़ फड़ ऊठे जीव सो ।। ले काया गढ घेर ।।
कुण बांधे सुखरामजी ।। जम सांमी समसेर ।। १४१ ।।

सभी जीव तड़फड़ने लगते है । उनकी काया गढ को यम घेर लेता है । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि ऐसे जालीम यम के सामने कोई तलवार लेकर लड़ाई करने को तैयार है क्या । ।। १४१ ।।

चवदे तीनुं लोक सो ।। सब घेरे जम राय ।।
कुण जीते सुखराम के ।। जम जालम सूं जाय ।। १४२ ।।

चौदह भुवन(भूर,भवर,स्वर,महर,जन,तप,सत्त,तल,अतल,वितल,सुतल,तलताल,रसातल

,महातल)और तीनों लोक(स्वर्ग,मृत्यु,पाताल)को यमराज ने घेर लिया है,तो ऐसा यह यम जालिम है। इससे लड़ाई करके कौन जीत सकता है,ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १४२ ।।

हम देख्या संत सूरवाँ ।। दीवी दाद निराट ।।
सात रोज सुखरामजी ।। घेरी जन की बाट ।। १४३ ।।

मैने शूरवीर संत देखा,उनको दाद निराट मिली। स्वयं मेरे जाने के रास्ते को यह यम सात दिन तक रोके बैठा रहा । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।१४३ ।।

धरम पुंन जिग जाप की ।। जप तप करणी अेक ।।
हम देखी सुखराम के ।। सब की जम घर देक ।। १४४ ।।

धर्म,पुण्य,यज्ञ,जाप,जप,तप और करणी करनेवाले सभी मैंने यम के घर में देखा ।(धर्म करने वाले,पुण्य करनेवाले,यज्ञ करनेवाले,जाप करनेवाले,तपश्या करनेवाले और करणी करनेवाले, इन सबको मैंने यम के घर में,भोग–भोगते हुए देखा ।)अपनी–अपनी करणी के प्रमाण से,अच्छे और बुरे भोग यम के घर ही भोगते है,ऐसा मैने देखा। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १४४ ।।

पवन चाडे कष्ट सूं ।। पुरब खाँचे सास ।।
उनका घर सुखराम के ।। जम पुर सन मुख बास ।। १४५ ।।

योगाभ्यास करनेवाले बहुतही कष्ट सहन कर अपना श्वास संखनाल के रास्ते से खीचकर भृगुटी में चढ्ढा लेते है। इनका घर यमपुरी के सामने है। ये यमपुरी के सामने रहते है। इनको यमपुरी सामने दिखती है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।१४५।।

अेक न माने जम सो ।। सब कूं राखे घेर ।।
ब्रम्ह भेदी सुखरामजी ।। ता आगे जम जेर ।। १४६ ।।

यम किसी एक भी बात नही मानता है। सबको यम घेरकर रखता है। परन्तु जो सतस्वरुपी ब्रह भेदी संत है उनके आगे यह यमराज बहुत ही आधीन हुआ रहता है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १४६ ।।

तो ही गुण बरते खरो ।। हम देख्यो हे जाय ।।
सात रोज सुखराम के ।। हम अटकाणा मांय ।। १४७ ।।

वह यमराज अधीन हुआ रहता है । तो भी वह अपना गुण प्रभाव दिखाता ही है । यह सब मैने जाकर आंखो से देखा है। आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,मैं भी सात दिन तक उनमें उलझा रहा । ।। १४७ ।।

मेर लंघे सो सूरवाँ ।। धरम राय को घाट ।।
सुखराम दास इण प्राण कूं ।। दुलभ पिछम बाट ।। १४८ ।।

जो मेरू में धर्मराज का घाट लांघकर आगे जायेगा,वही शूरवीर है । इस प्राण को पश्चिम

की बंकनाल की घाट बहुत ही दूर्लभ है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।१४८।

मेर डंड सूं फेर दे ।। तिण में फेर न सार ।।
हम देख्या सुखरामजी ।। अवघट घाट बिचार ।। १४९ ।।

यह यमराज जीव को मेरू दंड से वापस पलटा देता इनमे कोई फेर–फार नही । यह ऐसा अवघड घाट हमने बिचार करके देखा ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।१४९।।

लांघण को सासो भयो ।। घाटे थाह न कोय ।।
अेकण दिन सुखराम क्हे ।। हमने दीयो रोय ।। १५० ।।

मुझे ही इस घाट को पार करने की चिन्ता हो गयी है। इस घाट का थाह कुछ नही लगता । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,एक दिन तो मैं भी रो दिया। ।।१५०।।

धीर बंधाई ग्यान मे ।। जम जालम के गाँव ।।
उत्तरे यूँ सुखरामजी ।। ले साहिब को नांव ।। १५१ ।।

वहाँ सतगुरू के ज्ञान से धैर्य बांधी। यह यम तो है बहुत ही जालीम है परन्तु इसके गाँव में सतगुरू के ज्ञान से धैर्य हिम्मत बांधी गयी । वहाँ साहेब का नाम लेने से ही पार उतरा जा सकता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।। १५१ ।।

नव का नाँव जिहाज में ।। हम बेठा ता मांय ।।
बिन खेयां सुखरामजी ।। घाट न उतर्‌यो जाय ।। १५२ ।।

राम नामकी जहाज यानी बडे स्टीमर में मैं जाकर बैठ गया परन्तु उस स्टीमर को चलाये बिना यानी राम नामका स्मरण किए बिना इस घाट के पार नही जाया जा सकता । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १५२ ।।

खेवीं नाँव जिहाज कूं ।। धजा बांध निसाण ।।
पवन संग सुखरामजी ।। निस दिन चाली जाण ।। १५३ ।।

मैंने इस राम नाम रूपी जहाज को चलाया। उस जहाज पर ध्वजा बड़े–बड़े पाल कपड़े का बांधते है। उसे हवा लगती है और उस योग से नाव चलती है वैसे ही राम नामकी नाव,पवन(श्वास)के साथ चलती है। वह श्वास के साथ(राम नामकी ध्वनी)जहाज के जैसी चलने लगी । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।। १५३ ।।

जब घाटो हम लांगियो ।। निमख न लागी बार ।।
जरां जाय सुखरामजी ।। हूवा युँ ले पार ।। १५४ ।।

तब इस जालीम यम का घाट पार किया,उस घाट को पार करने में,एक पलक झपकने इतना भी समय नही लगा। इस प्रकार यम का घाट पार हुआ। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।१५४।।

अेक तमासा ओर हे ।। फेर कहुँ मैं आण ।।
बाजा बोहो सुखराम के ।। धरम राय के जाण ।। १५५ ।।

और भी एक दूसरा तमाशा है। वह मैं तुम्हे लाकर बताता हूँ। उस धर्मराज के यहाँ अनेक प्रकार के बाजे बजते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।१५५।।

डावे सर्वण बाज हे ।। बाजे राग अनेक ।।
भिंन भिंन कर सुखराम के ।। निरख्या जम पुर देक ।। १५६ ।।

बायें कान में बाजे की आवाज आती है उस बाजे में अनेक प्रकार की राग–रागिणी बजती है।मैं अलग–अलग करके सभी यमपुर अच्छी तरहसे देखा। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १५६ ।।

रागाँ बोहोत अनहद हुवे ।। जे रिझे जन कोय ।।
चलण न देवे पंथ कूं ।। अेसी रागाँ होय ।। १५७ ।।

वहाँ अनेक प्रकार के अनहद याने जिसकी सीमा वही ऐसी राग–रागिणी होती है । उस राग रागिणी में,यदी कोई संत रीझ गया वे राग रागिणीयाँ तो उस संत को आगे रास्ते पर चलने देती नही,संत राग–रागिणीयों में रीझकर वही रह जाता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १५७ ।।

सुणज्यो सिख सब पाछला ।। ओ दिष्टंग अेनाण ।।
अनहद बाजा झूठ हे ।। मन मत देज्यो जाण ।। १५८ ।।

मेरे पीछे के शिष्यों तुम सुनो । यह मेरा कहा हुआ दृष्टान्त सुनों । यमपुरी के ये अनहद बाजे और राग–रागिणीयाँ सभी झूठी है उन राग–रागिणीयाँ और अनहद बाजे मैं मेरे शिष्यो अपने मन को,जाने मत दो । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।१५८।

बाजे ज्यूँ छो बाजता ।। मन राखो घर एह ।।
जागत गोळा शब्द का ।। निरखो उन घर देह ।। १५९ ।।

बाजे बजे वैसे बजने दो । तुम अपने मन को घर में रखो । जागृत शब्द के गोले उस यम के घर पर चलाते रहो । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १५९ ।।

हम सारा सब देखिया ।। पंवन पांचू घेर ।।
नरपुर जीता नाग सूं ।। सुरग इकीसुं मेर ।। १६० ।।

श्वास और पाँचो इन्द्रीयों को पलटाकर मैने ये सब देख लिया । मै मृत्यु लोक को,नाग को और इक्कीस स्वर्ग को जीतकर,मेरू(धर्मराज की पुरी)भी जीत ली । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १६० ।।

जमपुर जीता अेक घर ।। छोडयो पुंन हर पाप ।।
आठ पोहोर सुखराम के ।। अेक निरंजण जाप ।। १६१ ।।

यहाँ यमपुरी को जीत लिया । पाप और पुण्य यह यम पुरी में ही छूट जाते है । आगे

आठो प्रहर दिन और रात निरंजन का जाप जपने लगा । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १६१ ।।

सिध आसण कूं साजियो ।। बेठा मन कूं घेर ।।
लिव माळा सुखराम के ।। निस दिन उर में फेर ।। १६२ ।।

सिंद्धासनकी साधना करके मन को घेरकर,जगह पर घेरकर बैठाया । लीव(राम नामका नाद) लगाकर यह माला रात-दिन हृदय में फेरने लगा । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १६२ ।।

जम राजा सूं राड कर ।। निस दिन अेके ताय ।।
जब जीता सुखरामजी ।। लिव समसेर बजाय ।। १६३ ।।

मैंने यमराज से हाथ में लव की तलवार लेकर एक ही जोश से रात-दिन लड़ाई की तब यमराज को लड़ाई में मैंने जीता । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।१६३।।

मन बुध चित्त बेराग सो ।। सुरत निरत ले भाग ।।
अेता मिल सुखराम के ।। जीता जम घर जाग ।। १६४ ।।

मन,बुद्धि,चित्त और बैराग्य ये सब और सूरत और निरत इन सभी ने लड़ाई में हिस्सा लीया । सब मिलकर यम घर में यम को जीता । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।१६४ ।।

सुर नर ग्रेहे पाताळ ले ।। तीन लोक सुख होय ।।
अब आया गो लोक मे ।। सुर घर जाणी जोय ।। १६५ ।।

सुर(देव),नर(मनुष्य)पाताल इन तीनों लोकों का सुख लेकर,अब मेरू के आगे गौ लोक में आया और देवताओं का घर जाना । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।१६५।।

बाजा खुलिया दाहिणा ।। नाद घुरे इण रीत ।।
के किण सुं सुखरामजी ।। राम न आवे चीत ।। १६६ ।।

वहाँ दाहीनी तरफ बाजे खुले,उस बाजे की आवाज इस रीती से गुंजती है,कि उस घोर नाद सुनने के आगे राम नामकी याद आती नही । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १६६ ।।

जबर घुरे निसाण सो ।। इंदर गाज न होय ।।
नाद घुरे सुखरामजी ।। उद बुद बाणी जोय ।। १६७ ।।

वह बहुत ही जबरदस्त घुरता है । उतनी इन्द्र की गर्जना(बादलो की गर्जना)भी होती नही है वैसा नाद गुंजता है । उस नाद की वाणी अद्‌भुत दिखती है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १६७ ।।

आठ पोहर अखंड रहे ।। अेक राग धुन बाण ।।

अनहद सुण सुखरामजी ।। नाद छिपाया जाण ।। १६८ ।।

वहाँ आठो प्रहर अखण्डीत एक जैसी वाणी और एक जैसी रागिणी रहती है । वह अनहद सुनकर नाद लुप्त हो जाता है जैसा जाणो । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १६८ ।।

लिछमी रे गो लोक में ।। बोहो सुख लील बिलास ।।
हम पीया सुखराम के ।। इमरत सास उसास ।। १६९ ।।

उस गौ लोक में लक्ष्मी रहती है वहाँ अनेक प्रकार की लीला और विलास होने से अनेक प्रकार के सुख है । उस गौ लोक में मैं श्वासो–श्वास में अमृत पान किया । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १६९ ।।

पूरब पिछम छाड कर ।। गऊ लोक में आय ।।
अब दरसत सुखराम के ।। घाटा सुं पलटाय ।। १७० ।।

मैं पुर्व और पश्चिम छोड़कर गौ लोक में आया । अब मुझे मैं मेरु घाट से पलट गया ऐसा दिखने लगा । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।१७०।।

ग्यान ध्यान मुख शिवरणा ।। करे पुरी के लोग ।।
कबुहक नाचे कम कमें ।। मून गहे कबु सोग ।। १७१ ।।

उस गौ लोक मे पुरी के लोग कोई ज्ञान कहते है कोई ध्यान करते है तो कोई मुंह से नाम का स्मरण करते है । उस गौ लोक के लोग कभी नाचते तो कभी कम–कमी खाते और कभी मौन धारण करके किसी से बोलते नही है और कभी भी चिन्ता फिकीर करते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १७१ ।।

मसतक धूणे लोक सो ।। मुख मोडे ते जाय ।।
लिछमी बर सुखरामजी ।। अेहे तमासा मांय ।। १७२ ।।

वहाँ से संत आगे जाते है तब गौ लोक के लोग अपनी गर्दन हिलाते है और मुंह टेड़ा मेड़ा कर, वे जा रहे है,ऐसा बोलते है । संत वहाँ से आगे जाते है तब वे जा रहे है ऐसा वहाँ के लोग कहते है और अपना मुँह बिघाड़ते चमकते है । मुँह और नाक टेढ़ा करके टिंगल करते है और वे जा रहे है ऐसा बोलते है और सभी लोक अपना मस्तक हिलाते है । वहाँ लक्ष्मी का पती विष्णु,अपने लोक में ऐसे तमाशे करता है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।१७२।।

बाजा कहुँ नाचे सही ।। आडी रोळ बखाण ।।
मुख चाडे. सुखरामजी ।। गाय जूंझ सब जाण ।। १७३ ।।

कही बाजे बज रहे है तो कही नाच इस प्रकार से संतो के आगे आड़े आते व मस्करी करते वे राग–रागिणी गा कर संतो से जूंझते है । परन्तु संत उनके लोक में न रूककर आगे निकल जाते है,तब गौ लोक के लोग अपने मुंह टेढ़ा करते यानी उपहास की मुद्रा

प्रदर्शित करते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १७३ ।।

इयाँ ते सिलता बीछडे. ।। सुरसत्त जमना गंग ।।
वाँ बाजा सुखराम के ।। उद बुद बाणी जंग ।। १७४ ।।

इस स्थान से गंगा,यमुना,इड़ा,पिंगला इनके रास्ते फूटते है । सरस्वती(सुष्मना)गंगा और यमुना वहाँ बाजे बजाते है । उस बाजे की अद्‌भुत वाणी की धूम होती है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १७४ ।।

इत गंगा बिच सुरसरी ।। इत जमनाँ को धाम ।।
तीनुं सुण सुखरामजी ।। चाली परसण राम ।। १७५ ।।

बांयी तरफ गंगा,बीच में सरस्वती और दांयी तरफ यमुना का धाम ये तीनों ही(इड़ा, पिंगला, सुषमना)राम का स्पर्श पाने को चली । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।१७५।।

गऊ कुंड सूं नीसरे ।। दोय दिसा दिस जाय ।।
तीजी सुण सुखराम के ।। गिर पर चडगी ध्याय ।। १७६ ।।

ये गंगा,जमुना गौ लोक के गौ कुंड से निकलकर दोनों दो दिशाओं में जाती है और तीसरी सुषमना दौड़कर मस्तक पर चढ़ती है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।१७६।

गुण जेती पुरियाँ सिरे ।। गंगा बहेछे छेक ।।
तीना सिरे सुखरामजी ।। जमना उद बुद पेक ।। १७७ ।।

रजोगुणी ब्रम्हा की पुरी,तमोगुणी महादेव का कैलास और सत्त्वगुणी विष्णू का वैकुंठ पुरी) ,सिरके उधर गंगा इन तीनों पुरीयोंको पार करके उपर यमुना को अद्‌भुत देखो ।।।१७७।।

इत उत सूं दोनूं मिली ।। ज्याहाँ ब्रम्ह का पाँव ।।
पग धोवे नित्त प्रीत सूं ।। साझे सुध बुध भाव ।। १७८ ।।

इधर से गंगा और उधर से यमुना दोनों मिल गयी । जहाँ ब्रम्हा का पैर है वहाँ ब्रम्हा प्रति-दिन बहुत ही प्रेम से अपने पैर धोता है और सुध और बुध से साधना करता है और भाव रखता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।। १७८ ।।

बीचे सुखमण गंग मे ।। उळझी दोय मेलाण ।।
पीछे सुण सुखराम के ।। ढुळी बीच मझ आंण ।। १७९ ।।

गंगा और यमुना के बीच सुषमना पुर्ण रूपमे मिल गयी । गंगा यमुना के बिचमे सुषमना पहुँचकर त्रिगुटी में ढुली । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १७९ ।।

ज्याँ बेठा तीनूं सिरे ।। ब्रम्हा बिसन महेस ।।
ताँ ऊपर सुखरामजी ।। झिल मिल जोती वेस ।। १८० ।।

ब्रम्हा,विष्णू और महादेव तीनों जहाँ बैठे है । उसके उपर ज्योती जगमगाती हुयी बैठी है ।

ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १८० ।।

ज्याँहा तीनूं सिलता मिली ।। त्रिबेणी के घाट ।।
जन सुखियाँ पुरियाँ बिचे ।। लिछमी बर को पाट ।। १८१ ।।

जिस स्थान पर तीनों सीलता(इड़ा,पिंगला व सुषमना)मिली उसे त्रिवेणी का घाट कहते है । इनकी पुरीयाँ में लक्ष्मी पती विष्णू का सिंहासन है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १८१ ।।

गंगा जमना सुरसरी ।। ढुळी कुंड में आण ।।
इण घर ते सुखरामजी ।। बिछडी आदू खाण ।। १८२ ।।

यह गंगा,यमुना,सरस्वती त्रिगुटी कुंड मे ढुली । सर्व प्रथम यहीं से जीव बिछड्कर गर्भ में आया इसलिए इसे आदी खाण कहा गया है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।१८२ ।।

जिनकी जाँ मे मिल गई ।। पाछे सत्त न होय ।।
त्रिवेणी के घाट मे ।। बोहो जल भरियो जोय ।। १८३ ।।

जिसकी जिसमें मिल गयी। जीव भृगुटी से आकर त्रिगुटी में मिल गया। भृगुटी और त्रिगुटी के बीच में एक जाली के जैसा परदा है। पीछे सत नाही होता। उस त्रिवेणी के घाट में बहुत ही पानी भरा हुआ दिखाई देता है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १८३ ।।

आठुं पुरियां मगन हे ।। तां मे दोय बखाण ।।
तां बीचे सुखरामजी ।। इमरत बरसे आण ।। १८४ ।।

आठ पुरीयाँ मग्न है। उस आठ पुरीयों में दो बखाण करने जैसी है । उनके बीच अमृत की वर्षा होती है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १८४ ।।

तेजी निपट निराट हे ।। बिसन लोक के मांय ।।
सुख अेता सुखरामजी ।। मोपे कहा न जाय ।। १८५ ।।

विष्णु के लोक में तेज ही तेज यानी अतिशय तेज है,वहाँ सुख इतने है,कि वे मुझसे कहा नही जाता। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १८५ ।।

इमरत बरसे कण झडे ।। बांगे राग अनेक ।।
मुख आगे सुखराम के ।। क्यूँ नहि चाले पेक ।। १८६ ।।

उस स्थान पर अमृत की वर्षा होती है और वहाँ कण(हिरे के तुकडे को हिरक कहते है),उस कण की झडी लगी है और उस जगह पर अनेक प्रकार की राग–रागिणी और अनेक प्रकार के बाजे बज रहे है। मुखके सामने गाने बजाने हो रहे है,वे देखकर आगे क्यों न जाये मतलब जो सामने हो रहा है,उसे देखके आगे चलो। ।। १८६ ।।

त्रिवेणी के घाट मे ।। अेक तमासो ओर ।।

देवळ में सुखरामजी ।। निस दिन बोले मोर ।। १८७ ।।

उस त्रिवेणी के घाटपर एक और भी तमाशा है । मंदिर में याने मस्तक के उपरी भाग पर रात –दिन मोर बोलता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १८७ ।।

देख्या निरत निहार के ।। अे तो मोर न होय ।।
निझ हंसा सुखरामजी ।। आण बिराज्या जोय ।। १८८ ।।

मैं निरत से निहारके देखा तो मुझे दिखा की यह मोर तो नही है। यह तो मेरा निज हंस है वह आकर बैठा है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १८८ ।।

त्रिबेणी के घाट में ।। हीरा चुणे अमोल ।।
हंसा कूं सुखराम के ।। जब जुग बंध्यो तोल ।। १८९ ।।

उस त्रिवेणी के घाट पर यह हंस अनमोल हीरे(राम नाम)बेचने–खरीद ने लगा,भजन करने लगा। जब इस हंस ने संसार को तौलकर बाँध लिया,यह मैं कह रहा हूँ ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १८९ ।।

केळा करे किलोळ से ।। हंसे हरख अपार ।।
खीर नीर सुखराम के ।। न्यारा किया बिचार ।। १९० ।।

त्रिगुटी में हंस अनेक प्रकार की क्रिडा करता है और किलकारी मारता है । उस जगह पर हंस को अपार हर्ष होता है । वहाँ हंस ने दूध और पानी अलग–अलग किया मतलब माया और सतस्वरुप ब्रम्ह का निर्णय किया ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले।१९०।

त्रिवेणी के घाट में ।। हंस गयो दुख भूल ।।
हीरा चुणे सुखराम के ।। मगन भयो फर फूल ।। १९१ ।।

उस त्रिवेणी के घाट में,हंस पीछे के सभी दु:खों को भूल गया। हीरे चुणने मे याने राम भजन करने में मग्न हो गया और बहुत ही प्रफुल्लीत हुआ। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले।।। १९१ ।।

उडने की अब ने करे ।। पाया सुख अनेक ।।
सुण हंसा सुखराम के ।। अे नेहचल बेस न पेक ।।१९२ ।।

त्रिवेणी के घाट से हंस अब उड़कर जाने की इच्छा नही करता । इस त्रिगुटी में हंस को अनेंक प्रकार के सुख मिलते,इसलिए आगे नही जाना चाहता तो हंसो सुनो,अरे यह देश निश्चल नही है इसलिए यहाँ रुको नही आगे चलो । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।१९२।।

जावेगो सुख धाम ओ ।। फिर याही का सब भूप ।।
चल हंसा सुखराम के ।। ज्याँहा साहब बिन रूप ।। १९३ ।।

इस देश का नाश होगा इसलिए उड़कर आगे चल । अरे,यह(त्रिगुटी का धाम)नाश को प्राप्त होगा प्रलय में जायेगा । जिस दिन इस शरीर का नाश होगा उस दिन देह मे

की,त्रिगुटी का भी नाश होगा फिर त्रिगुटी के राजा और सभी ही नाश को जायेगे तो हंस आगे चल,अरूपी साहेब जहाँ है,वहाँ चल। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।१९३।।

काळ न पूंचे कामना ।। वाहाँ माया नहि जाय ।।
सुण हंसा सुखराम के ।। वो सत्त धाम कहाय ।। १९४ ।।

अरूपी साहब के देश में काल नही पहुँचता । और वहाँ माया भी नही जाती है तो हंस सुन । वह अरुपी साहेबका धाम सत् है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।१९४।।

ओ माया को देस हे ।। नेहचे जम फिर जाय ।।
सुण हंसा सुखराम के ।। तूं मत भूले सुख मांय ।। १९५ ।।

त्रिगुटी में तो काल की फेरी लगती रहती है,यम निश्चय ही जाता है । अरे हंस(जीव),तूं इस त्रिगुटी के सुखों में,भूल मत । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।१९५।।

मान हमारी बात कूं ।। उड़ छाड़ो ओ धाम ।।
चल हंसा सुखराम के ।। ज्याँहा माया बिन राम ।। १९६ ।।

अरे मेरी बात मान और इस त्रिगुटी को छोड़कर यहाँसे उड़कर आगे चल । वहाँ माया के बिना सिर्फ राम है । यानी वहाँ काल के बिना सिर्फ राम है । उस देश को उड़कर चल । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।१९६।।

अमर आसा इधक हे ।। बिन टेके सत्त धाम ।।
चल हंसा सुखराम के ।। वाहाँ हम हि तुम राम ।। १९७ ।।

उस अमर देश की आशा अधिक है । वह सतधाम बिना टेके का है । उसे आधार किसी का भी नही,वहाँ मैं और तुम ही राम है । मेरे व तेरे शिवा दुजा कोई राम नही है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १९७ ।।

बातां सुण चंचळ भयो ।। हंसे लगी उदास ।।
कब देखूं सत्त लोक कूं ।। नेहचळ निरभे बास ।। १९८ ।।

इस बात को सुनकर हंस यहाँ के सुख से उदास होकर चंचल हो गया । और वह सत्त लोक मैं कब देखूँगा । ऐसा चंचल हो गया । वह सत्त लोक निश्चल और निर्भय रहने का स्थान है वह मैं कब देखूँगा । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १९८ ।।

आठ पोर चोसट घड़ी ।। अे मुख माने नांह ।।
हंसे की सुखराम के ।। अंछया सत पुर जाह ।। १९९ ।।

आंठो प्रहर और चौसठ घडी इन त्रिगुटी के सुख को माने नही । इस हंस की इच्छा सतपूर में जाने की हो गयी ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। १९९ ।।

लागो फेर उदास होय ।। उपजी पीड़ सरीर ।।

अे निस सुण सुखरामजी ।। हंसो धरे न धीर ।। २०० ।।

जीव बहोत उदास होने लगा सतपुर मे जानेकी शरीर में पीड़ा उत्पन्न हो गयी । रात-दिन हंस धीरज नही धर पाता । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। २०० ।।

त्रिबेणी छिल ऊबकी ।। हंसे कियो उठाव ।।
धार चली सुखराम के ।। घी थीणो के साव ।। २०१ ।।

त्रिवेणी पुरी भर भरकर ढुलने लगी तब हंस ने वहाँ से अपना प्रस्थान किया । वहाँ से धारा चली,वह धारा पिघले हुअे घी के स्वाद समान थी । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। २०१ ।।

बरसे तेज अनोप सो ।। मोपे कहयो न जाय ।।
पुरियाँ च्यारू बीच मे ।। हो अटळ मट छाय ।। २०२ ।।

वहाँ अनूप,जिसकी उपमा नही दी जा सकती,ऐसा तेज बरसने लगा । वहाँ का तेज मुझसे कहा नही जाता,इस पुरीयों के बीच में अटल मठ बनाकर उसमें मै रहने लगा । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। २०२ ।।

त्रिवेणी चंद सूर बिच ।। लागो थंभ बिचार ।।
सुर डांडे सुखरामजी ।। इमरत चवे सार ।। २०३ ।।

त्रिवेणी चन्द्र और सुर्य(इड़ा और पिंगला)बीच में स्तंभ लगा। उसका विचार किया, देवताओंके दरवाजे पर अमृत टपकने लगा। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।।२०३ ।।

माया सुख अपार हे ।। बाहर आ बिध होय ।।
चिगे सुण सुखराम के ।। न्यारा करके जोय ।। २०४ ।।

अन्दर मायाके अपार सुख है,बाहर यह विधी होती है । अरे हंस सुन और उस सुखको न्यारा करके देख । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। २०४ ।।

डांडी सुण सब घ्राण की ।। घीसे चुपड़ी आण ।।
सब मुख बरसे तेज सो ।। युँ सुखिया निस दिन जाण ।। २०५ ।।

नाक की दंड़ी घी से चुपडी हो गयी व पूरे मुँह पर रात दिन तेज बरसने लगा,ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। २०५ ।।

साव आद मीठो घणो ।। चिकणाइ बोहो होय ।।
सुखमण सुख सुखरामजी ।। ठंडी बरसे जोय ।। २०६ ।।

आदी स्वाद बहुत ही मीठा लगता है और चिकनाई भी बहुत है । सुषमना का सुख कड्क धूप मे ठंढी पड़ने जैसा देखो । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।२०६ ।।

त्रिबेणी तीनूं मिले ।। ज्याहाँ हंसे की बाट ।।
पुरियां दोय सुखराम के ।। उथळे तेज निराट ।। २०७ ।।

त्रिवेणी में इड़ा,पिंगड़ा,सुषमना ये तीनों जहाँ मिलती है,वहाँ से हंस का आगे जाने का रास्ता है । दो पुरीयोमे अतिशय तेज है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || २०७ ||

गंगा जमना सुरसरी || मिले त्रिबेणी मांय ||
सुखिया अंतर फेर हे || धारा तीन लखाय || २०८ ||

ये गंगा,यमुना,सरस्वती त्रिवेणी में मिलती है । फिर भी इन तीन धाराओमे अंतर दिखाई पड़ती है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || २०८ ||

सुखमण आई घोर के || ससी सूरज बिच होय ||
हीरा कण सुखराम के || निस दिन बरसे जोय || २०९ ||

सुषमना चंद्र व सुर्य(इड़ा और पिंगडा)के बीच गर्जना करती हुयी आयी । वहाँ हीरे के कण रात-दिन बरसते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || २०९ ||

उत्त सूरज इत चंद हे || बीचे आ बिध होय ||
नांव लिया सुखराम के || जीव पलट कर जोय || २१० ||

उधर दाहीनी तरफ सूर्य और इधर बांयी तरफ चन्द्र और इस सूर्य और चन्द्र के बीच जीव पलटने की विधी होती है । राम नाम लेने से जीव पलटा देखने मे आया । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || २१० ||

हंसो वाँ थिर होय रयो || निस दिन निरखे अेह ||
जळा बूँदा सुखराम के || इमरत बरसे मेह || २११ ||

हंस वहाँ स्थिर हो रहा है और रात-दिन देख रहा है । वहाँ अमृत सरीखे पानी की बूंदो की बारीष होती है । उस बरसते हुयी वर्षा को हंस देख रहा है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || २११ ||

वाँ तीनुं अेके मिली || अंतर नहिं लिगार ||
ओथ पोथ सुखराम के || सीस सूरज के बार || २१२ ||

ये तीनों(इड़ा,पिंगड़ा और सुषमना)एक ही जगह मिल गयी । एक स्थान पर मिलने में कोई संदेह नही रह गया । वहाँ ये सुर्य और चंद्र के ओत-पोत होने की बात हो गयी । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । || २१२ ||

गंगा जमना सुरसरी || मिले सुलट कर जाय ||
पुरियाँ सुण सुखराम के || अब त्रिबेणी माय || २१३ ||

यह गंगा,यमुना,सरस्वती(इड़ा,पिंगड़ा,सुषमना)ये सब सुलटकर जाकर मिल गयी । त्रिवेणी में बत्तीसों(पुऱ्या)की हलचल हुयी और अब डोर पलट गयी ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ||२१३||

बत्तिसूं हल चल भई || पलटाणी अब डोर ||

सातुं सुर सुखराम के ।। ज्यां निस बोले मोर ।। २१४ ।।

ये सातो सुर(दो कान के,दो आंख के,दो नाक के और एक मुंह के),इनमें रात दिन मोर बोलता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।। २१४ ।।

अेक तमासो देखियो ।। हंसे के उणियार ।।
मुख अेता उण पंछी के ।। ज्युँ थिथ लारे बार ।। २१५ ।।

और भी अधिक एक तमाशा देखा,हंस का(जीव का)स्वरूप देखा । उस पक्षी को सात मुँह है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। २१५ ।।

उत्तर दिसा कूं अेक हे ।। दूजो दिखण कहाय ।।
पूरब कूं सुखराम के ।। पाँचू दरसे माय ।। २१६ ।।

एक मुँह उत्तर दिशा में(बायाँ कान),दूसरा मुँह दक्षिण में(दायाँ कान)और पूर्व में पाँच मुँह दिखाई पड़े,(दो आंख के,दो नाक के और एक मुंह),इस प्रकारसे मुझे दिखायी पड़ा । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।२१६।

अेसो उद बुद हंस हे ।। ता गत कही न जाय ।।
दोय मूंडा सूं बास ले ।। सुखिया तीजे खाय ।। २१७ ।।

यह हंस ऐसा अद्भुत है की उसकी गती मुझसे कही नही जाती । यह हंस नाक के दो मुँह से सूंघने का काम करता है और तीसरे एक मुँह से खाता है । ।। २१७ ।।

देख परख ले दोय सूं ।। दोयां सुण ले ग्यान ।।
से हंसा सुखराम के ।। हम देख्या परवाण ।। २१८ ।।

दो मुँह से(आँखों से)देखकर परीक्षा कर लेता है और दो मुँह(कान से)इससे ज्ञान सुनता है। इस प्रमाण से हंस को मैंने देखा। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले।२१८।

बारी तिल परवाण हे ।। फिर राह उन मान ।।
अब हंसो सुखराम के ।। अटकाणो उण धाम ।। २१९ ।।

उसके आगे तिल इतनी के जैसी खिड़की है। उस खिड़की का आकार राई इतना है। अब वह हंस उस धाम में उसी जगह अटक गया है। इस छोटी खिड़की से निकलना कठिण हो गया इसलिए हंस वहाँ अटक गया है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।२१९।

ता पर ओर बिचार हे ।। धजा फरूके सीस ।।
ताहाँ अेक सुखरामजी ।। गेलो बिस्वाबीस ।। २२० ।।

उस के उपर एक और भी बात दिखायी पड़ी,कि उस खिड़की के दूसरी तरफ एक ध्वजा फरुक रही है । खिड़की के दूसरी तरफ ध्वजा फरुक रही है मतलब वहाँ जाने के लिए शत-प्रतिशत रास्ता जरूर है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।२२० ।।

मुख शिवंरण पूंचे नही ।। सासा सके न जाय ।।

वा बारी सुखराम के ।। को कुण खोले आय ।। २२१ ।।

उस जगह पर मुँह से किए गया सुमीरन जा नही सकता और श्वास भी वहाँ नही पहुँच सकता आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि वह खिड़की अब कौन खोलेगा,वह बताओ? मुंह से किया स्मरण और श्वास भी उस खिड़की के दूसरी तरफ जा नही सकता तो उस खिड़की को कौन खोलेगा यह बताओ?ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२२१।।

हंसे को बळ ना लगे ।। बारी सिर पर होय ।।
सातूं मुख सुखराम के ।। चहुँ दिस पसऱ्या जोय ।। २२२ ।।

हंस की ताकत वहाँ नही लगती है कारण वह खिड़की मस्तक के उपर है । ये सांतो मुँह (कान,आँख,नाक और मुँह)ये चारो तरफ फैलकर,अपना-अपना आहार,चारो तरफ से लेते है ।(कान-सुनना,आँख-देखना,नाक-सूंघना और मुँह-रस चखना),इस प्रकार से अपना-अपना आहार चारो तरफ फैलकर लेते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।।२२२।।

अे मुख बरज्या नां रहे ।। चहुँ दिस लेह अहार ।।
बाहाँ बड़ता सुखराम के ।। हंसे सिर बोहो मार ।। २२३ ।।

ये जो मुँह है ।(कान, नाक,आँख और मुँह)ये मना करने पर भी मानते नही है । चारो दिशाओं से अपने-अपने आहार लेते है । उस खिड़की में प्रवेश करते समय,हंस के मस्तक पर बहुत ही जोर की मार पड़ती है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २२३ ।।

सुरत निरत अंछया धरे ।। वाहाँ लग पूगे जाय ।।
बारी मे सुखराम के ।। आगो धसे न माय ।। २२४ ।।

सूरत और निरत इच्छा करती,वहाँ तक जाकर पहुँचती है परन्तु उस तिल इतनी छोटी खिड़कीके अन्दर आगे जा नही पाती। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले।२२४।

पाँचु उत्तते बावडे ।। फिर इनही का सिरदार ।।
बारी लग सुखराम के ।। अे नहिं पूंचन हार ।। २२५ ।।

वहाँ से पाँचो विषय तथा इनका सरदार वापस लौट जाते है । खिड़की तक ये पहुँच नही सकते । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २२५ ।।

दुलभ दीठा जोर सो ।। अेसो घाट न कोय ।।
सिव सक्ति सुखराम के ।। अे भी नीचा होय ।। २२६ ।।

यह घाट बहुत ही दुर्लभ,कठिण और जोरदार दिखा । ऐसा दूसरा कोई भी बिकट घाट नही है । शिव ब्रम्ह और शक्ती ये भी इस बिकट घाट के नीचे ही है । ।।२२६।।

नव तत लिंग सरीर हे ।। ओ भी ऊली बार ।।

हम देख्या सुखराम के ।। बारी खोल किंवार ।। २२७ ।।

और यह अंगूठे के आकार का नव तत्व का(आकाश,वायु,अग्नी,पानी,पृथ्वी,चित्त,मन,बुद्धि और अहंकार),लींग शरीर भी इधर ही रहता है परन्तु मै खिड़की का दरवाजा खोलकर दूसरी तरफ जाकर सब कुछ देखा। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।२२७।

धसिया गुर परताप सूं ।। साहब सनमुख होय ।।
हम बळ सूं सुखरामजी ।। बारी खुली न कोय ।। २२८ ।।

सतगुरू के प्रताप से खिड़की के अन्दर प्रवेश कर मैं मालिक के सन्मुख हुआ । वह खिड़की मेरे बलसे खुली नही। वह खिड़की सतगुरू के प्रतापसे खुली। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२२८ ।।

जिण पुळ में खिडकी खुली ।। तब अेसी बिध होय ।।
सात मुख सुखराम के ।। हंसे सुध्द न कोय ।। २२९ ।।

जिस क्षण यह खिड़की खुली उस समय ऐसा हुआ कि सातों मुँह(कान,आँख,नाक और मुँह) इनको और हंस को(जीव को)कोई भी सुधी(भान)नही रही । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २२९ ।।

आगे पाछे मध में ।। अेक न दरसी मोय ।।
बारी खुली तिण बार में ।। अेसी या बिध होय ।। २३० ।।

आगे,पीछे या बीच में मुझे एक भी बार सुध है ऐसा नही दिखाई पड़ा । शरीर बेसुध हो गया । जब खिड़की खुली तब ऐसा हुआ,मुझे कुछ भी भान नही रहा । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २३० ।।

रटणा थाकी त्रिगुटी ।। भंवर गुफा के घाट ।।
बारी लग सुखरामजी ।। धुन चाली सुध बाट ।। २३१ ।।

राम नाम रटना,ये तो त्रिगुटी की भवर गुफाँ की घाट के,उपर ही थक गया । उस खिड़की तक ध्वनी सिर्फ बारीक रास्ते से चली । उसकी सूध मुझे मालूम है । ।। २३१ ।।

त्रिगुटी में मुख तीन सूं ।। हंसे चय्यो न जाय ।।
च्याराँ सूं सुखराम के ।। क्युँ अेक भोजन खाय ।। २३२ ।।

त्रिगुटी में हंस के तीन(नाक के दो और मुँह का एक),इन तीनों मुँहो से चला नही जाता और चारों मुँहो से(कान के दो और आँख के दो),इन चारों मे कोई एक भोजन करता है । (सुनता और देखता ।) ।। २३२ ।।

सपत दीप को वास तज ।। मिले आद घर माय ।।
तब तन सूं सुखरामजी ।। हंसे कछू न थाय ।। २३३ ।।

सात द्विपों का निवास छोड़कर आदी घर याने जहाँ से आया वहाँ,जाकर मिल गया । उस समय हंस से(जीव से)शरीर से कुछ भी नही होता । यह शरीर बेकार हो जाता,इस शरीर

से जीव,कुछ भी नही कर सकता ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२३३ ।।

पाँच पचीसुं हंस का ।। था के अे बळ पाण ।।
वाहाँ आगे सुखराम के ।। बोल सके नहि बेण ।। २३४ ।।

हंसका पाच इंद्रियोका व पंचविस प्रकृती का बल भी थक जाता। आगे जानेपे हंस मुखसे वचन भी बोल नही सकता । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२३४।।

चित्त चेत न निझ मन रे ।। निरत खुले सत्त नेण ।।
सब दरसे सुखराम के ।। बोल सके नहि बेण ।। २३५ ।।

इनके आगे चित्त,चैतन्य,निजमन,निरत और सत्तनेत्र ये साथ रहते। सत्तनेत्र से सब दिखता परंतु हंस मुखसे वाक्य बोल नही सकता ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।२३५।

भंवर गुंफा आसन रहे ।। ताहाँ गुँज धुन होय ।।
दरसे सब सुखरामजी ।। गिगन तमासा मोय ।। २३६ ।।

वहाँ भवर गुफाँ में(त्रिगुटी में)मेरा आसन रहता है,वहाँ गुंजार ध्वनी होती है और वहाँ गगन के सभी तमाशे मुझे दिखाई पड़ते है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले।२३६।

भंवर गुंफा कूं छाड़ के ।। उड़े हंस तिण बार ।।
तीन लोक सुखराम के ।। खाली भया बिचार ।। २३७ ।।

भवर गुफाँ को छोड़कर जब हंस उड़ता है उस समय तीनों लोक खाली हो गये,ऐसा समझने लगता। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २३७ ।।

नीर अंस को निज हंस हे ।। फिर झीणे सूं झीण ।।
बाजा सुण सुखराम के ।। थाकी अनहद बीण ।। २३८ ।।

यह नीर अंशका मेरा हंस है । वह झीणे से भी झीणा है । अणु की अपेक्षा भी बारीक है,वहाँ बाजे सुनना और अनहद बीणा ये सब भी थक गये । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २३८ ।।

पवन थो थो बेहेत हे ।। हंसे को अस्थूल ।।
ज्याहाँ घी बिन सुखराम के ।। गोरस घर घर मूल ।। २३९ ।।

वहाँ बिना ध्वनी का खोखला श्वास चलता है । हंस का स्थूल और वहाँ घी के बिना गोरस (दूध–छाछ)घरो–घर मूळ ( ) ।। २३९ ।।

दही बिलोयर काढियो ।। न्यारो कियो हलाय ।।
पवन सूं सुखराम के ।। युं हंस बिछडयो मांय ।। २४० ।।

वहाँ दही को मथकर घी जैसे अलग निकालते है उसी प्रकार हंस श्वास छोड़कर अलग हो गया है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २४० ।।

पिछम दिसा कूं पलटिया ।। तब मांखण ज्यूँ होय ।।

क्युँई गोरस को भेल हे ।। लेवा लेह न कोय ।। २४१ ।।

पश्चिम दिशा में पलटा तब मख्खन के जैसा हो गया । घी में थोड़ीसी भी छाछ रही,तो घी लेने वाले घी नही लेते है । ।।२४१।।

युँ भँवर गुफा लग हंस के ।। माया पवन को मेल ।।
सुखिया छाडे त्रिगुटी ।। तां दिन रत्ती न भेळ ।। २४२ ।।

इस प्रकारसे भवर गुफाँ तक माया और श्वास हंसके साथ रहते है । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है कि जिस दिन त्रिगुटी छोड्ता उस दिन माया और श्वास का रत्तीभर भी मेल नही रहता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२४२।।

घी ज्यूं ताय नि तारियो ।। जब मान्या सा राम ।।
सुखिया गोरस फूल जुं ।। सब ही रहया इन धाम ।। २४३ ।।

घी को तपाकर उसमें की छाछ को जला देते है । तब लोग घी मानते है । गोरस(छाछ) फूल जैसे सभी,इस जगह पर छुट जाते है । तब राम मानते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।२४३।

हंसो हुवो न केवळो ।। सब सूं न्यारो जोय ।।
आगे युँ सुखराम के ।। कछु न दरसे मोय ।। २४४ ।।

हंस बेरी आदिको छोड़कर अलग अकेला हो गया और सबसे न्यारा हुआ ऐसे हंस को देखा। इसके आगे मुझे भी नही दिखायी पड़ता। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले।२४४।

बारी के अद बीच में ।। अेक फूल हे ओर ।।
तांके कळी हजार हे ।। ज्याँ माया की ठोर ।। २४५ ।।

इस खिड़की के बीच में और भी एक फूल है। उस फूल की हजार पंखुड़ीयाँ है। उस फूल में ही माया के रहने का स्थान है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।२४५।

इमरत कुंड तां मे भऱ्यो ।। ज्याँ लग हंसो जाय ।।
सपने ज्युँ सुखरामजी ।। सुख दरसे तां मांय ।। २४६ ।।

वहाँ उस हजार पंखुड़ीयों के कमल में अमृत का कुंड भरा है । वहाँ तक हंस जीव जा सकता है। परन्तु उस सहस्त्र पंखुड़ीयों के कमल का सुख,मुझे स्वप्न जैसा दिखायी पड़ता है ।(जैसे सोते हुए स्वप्न आता है,तब वह खरा दिखता है। परन्तु जाग जाने पर सब झूठा साबित होता है। उसी प्रकार सहस्त्र पंखुड़ी के कमल का सुख,मुझे झूठा स्वप्न के जैसा दिखता है। ऐसा दिखने लगा ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले।२४६।

तां कुंड के शिर ऊपरे ।। जायर बेसूं तीर ।।
पाछो सुण सुखराम के ।। याद न आवे बीर ।। २४७ ।।

उस कुंड के उपर जाकर,कुंड के किनारे पर जाकर बैठा । वहाँ पीछे की बाते याद ही

नही आती । पीछे की सभी बाते भूल गया । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२४७।

आगे सुंन सागर भऱ्यो ।। वार पार नहिं छेह ।।
वाँ हंसो सुखराम के ।। पटके सब तन देह ।। २४८ ।।

उस कुण्ड के आगे सुन्नसागर भरा हुआ है । उस सुन्न सागर का आर–पार या अंत आता नही है। वहाँ जाकर हंस अपने ऐसे सभी शरीर पटक देता है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २४८ ।।

अनंत पांख को फूल हे ।। सुंन सागर के मांय ।।
ता आगे सुखराम के ।। कित्त आवे कित्त जाय ।। २४९ ।।

उस सुन्न सागर में अनंत पंखुड़ीयों का कमल है । उसके आगे आदि सतगुरूजी महाराज कहते है हंस कहाँ जाता है?और कहाँ से आता है?यह समजता नही ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २४९ ।।

पाछो आवे फेर याँ ।। तब भेटे सुर लोक ।।
वाँ आवे सुखराम के ।। जब लग पाँचु भोग ।। २५० ।।

वहाँ से धक्का खाकर यदी वापस आया तो उसे देवलोक मिलता है । मतलब देवताओं के लोक में वापस आकर रहता है व(रूप,रस,गन्ध,स्पर्श,शब्द)ये पांचो भोग देवताओं के लोक में लेता । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २५० ।।

अे निस आसण इडग हे ।। भँवर गुफा के मांय ।।
सत्त धाम सुखरामजी ।। कबु येक देखे जाय ।। २५१ ।।

रात–दिन भवर गुफाँ में(त्रिगुटी में)अडिग याने न डगमगाने वाला आसन है । फिर भी सत्तधाम कब देखने को मिलेगा ऐसा हंस को लगता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। २५१ ।।

अेसी गत्त करतार की ।। कहा सुणाऊं आण ।।
रूप न दरसे रंग सो ।। सुखिया नाद बखाण ।। २५२ ।।

उस कर्त्तार की ऐसी गती है कि वह मैं लाकर क्या बोलू । वहाँ रूप भी नही दिखाई पड़ता और रंग भी नही दिखता । वहाँ तो सिर्फ नाद है वह मैं कहता हूँ । ।। २५२ ।।

ज्युँ निदरा में नर पोड कर ।। हंस कळा जुग भूल ।।
यों उथे सुखराम के ।। हंसे ओ सुख सूल ।। २५३ ।।

जैसे हंस सुषुप्ती में डूबकर संसार की सभी कला भूल जाता है उसी प्रकार का सुख हंस को आता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२५३।।

निरखत निरखत गिगन कूं ।। सबे चेन मिट जाय ।।
ज्युँ नर कूं सुखराम के ।। निंद गरास्यो आय ।। २५४ ।।

आकाश को देखते-देखते सभी चैन मिट जाते है । जिस प्रकार से मनुष्य को नींद आती है उस समय बाहर के दिखने वाले सभी चरीत्र वह सब दिखना मिट जाते है । उसी प्रकार सभी चैन मिट जाते हैं । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २५४ ।।

अेसी बिध सत्त लोक की ।। केत बणे नहिं कोय ।।
जो जाणी सुखरामजी ।। सो मेरा गुरू होय ।। २५५ ।।

सत्तलोक की यह विधी कहते नही आती । जैसे सुषुप्ती नींद आकर लगती है । तब बाहर की विधी कही नही जाती। उसी प्रकार सत्तलोक की विधी बताये नही जाती। यह सत्तलोक की विधी जो जानता है वह मेरा गुरू होगा ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२५५।।

कहेत सुणत को क्या सरे ।। देख्याँ ही सुख होय ।।
बिन पूतां सुखरामजी ।। भेद न आवे कोय ।। २५६ ।।

वह कहना और सुनना किसी काम का नही है । वह सत्तलोक का सुख तो सत्तलोक में जाकर लेनेपर प्राप्त होगा । वहाँ सत्तलोक में पहुँचे बिना वहाँ के भेद कहने और सुनने से,कुछ भी सुख मिलने वाला नही। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।२५६।

केबा की कुछ नाय हे ।। ने सुण ने की होय ।।
परस्या सुं सुखराम के ।। सब जुग दरसे जोय ।। २५७ ।।

वह कहने की कोई बात नही और सुनने की भी कोई बात नही हैं । वह तो जाकर लेनेकी बात है । वह सुख लेनेपर करने पर सारा संसार दिखायी पड़ने लगता हैं । ।। २५७ ।।

उद बुध बात अनोप हे ।। अेसी ओर न कोय ।।
देख्यां ई सुखराम के ।। केतन आवे मोय ।। २५८ ।।

यह अद्‌भुत बात अनूप जिसका उपमा नही दी जा सकती,ऐसी बात है । वैसे और कोइ दूसरी बात नही है । वह मैंने देख लिया तो भी मुझसे कही नही जाती है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२५८ ।।

ना सत्त कूं तो सत्त हे ।। सब वाँ की पेदास ।।
च्यारूं जुग सुखराम के ।। बंदे तीनुं बास ।। २५९ ।।

उसे मैं नाश होने वाली है कहीं तो नाश होनेवाली कहते नही आती कारण सब की उत्पत्ती से हुयी है । सत्ययुग,त्रेता,द्वापार,कलियुग इन चारो युगों में स्वर्ग,मृत्यु,पाताल ये तीनों लोक उसकी वंदना करते है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२५९।।

पाँच तत्त गुण धात ज्यूँ ।। सब याँहि सूं होय ।।
वे अेसा सुखराम के ।। वाँ रूप न दर से कोय ।। २६० ।।

पाँच तत्व तीन गुण और सात धातू ,ये सभी यही से उत्पन्न होते है । परन्तु उसका रूप दिखाई नही पड़ता वह अरूपी है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२६०।।

सत्त लोक महेमा कहुँ ।। सुणो सकळ जन आय ।।
भँवर गुफा सुखदेव के ।। मत भूलो या मांय ।। २६१ ।।

उस सत्तलोक की महिमा मैं कहता हूँ ये सभी जन(संत)आकर सुनो । इस भवर गुंफाँ के (त्रिगुटी के)सुख को देखकर त्रिगुटी के सुख में कोई भूलो मत ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २६१ ।।

सुंन सरूपी ब्रम्ह हे ।। ताय सरूपी धाम ।।
मेहेमा सुण सुखराम के ।। क्युँ कर गेहुँ राम ।। २६२ ।।

वह सुन्न रूपी ब्रम्ह है और उस ब्रम्ह रूप काही वह धाम है । आदि सतगुरू सुखरामजी कहते है कि उस राम की महीमा किस प्रकारसे करु और उस राम को मैं किस प्रकार से पकडूं । कारण वह राम दृष्टी से या मुट्ठी में,पकड़ा नही जाता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २६२ ।।

रूप कहुँ दीसे नही ।। रंग न दरसे मोय ।।
मेहेमा सुण सुखराम के ।। क्युँ कर गेहुँ तोय ।। २६३ ।।

उसका रूप कहने जाता तो वह दिखाई नही पड़ता और उसका रंग भी मुझे नही दिखता फिर मै उसकी महिमा किस प्रकार से लाकर तुम्हें बताऊं। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २६३ ।।

चोड़ा कूं तो छे:ह नही ।। बार न दीसे पार ।।
अेसा सुण सुखराम के ।। सांई सिर जन हार ।। २६४ ।।

उसकी चौड़ाई यदी बताऊं तो उसका अंत नही आता और आर–पार भी नही दिखाई पड़ता । वह स्वामी शिरजणहार,सबकी उत्पत्ती करनेवाला ऐसा हैं यह सुनो ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २६४ ।।

सुख दुख अेक न सांच रे ।। जे तीन लोक में होय ।।
वां की बिध सुखराम के ।। न्यारी दरसे मोय ।। २६५ ।।

तीन लोक(स्वर्ग,मृत्यु,पाताल)मे जो सुख और दु:ख है वे तो वहाँ प्रवेश भी नही करते । उसकी वहाँ की विधी तो मुझे सबसे न्यारी दिखती है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २६५ ।।

केणे मे आवे नही ।। मुष्ट न पकड़या जाय ।।
क्या के बरणूं ब्रम्ह कूं ।। वहाँ का सुख यहाँ आय ।। २६६ ।।

वह कहाँ नही जाता और मुट्ठी में भी पकड़ा नही जाता । उस शिरजनहार ब्रम्ह का मैं क्या वर्णन कहूँ कैसे वर्णन करूं । मुझसे उसका वर्णन कहा नही जाता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २६६ ।।

मीठा कहुँ तो झूठ हे ।। कड़वा रती न होय ।।

सेझाँ सुख सुख रामजी ।। क्युँ कर बरणे लोय ।। २६७ ।।

उसको मिठा बोलो तो झूठ है और कडुवा तो रतीभर भी नही । स्त्री सुख का स्वाद कोई कह नही सकता उसी प्रकार से ब्रम्ह का सुख कहते नही आता । ।। २६७ ।।

धीरत साव सुख सेज का ।। अेतो दिष्टंग होय ।।
वहाँ का सुख सुखराम के ।। उद बुद दरसे मोय ।। २६८ ।।

घी का स्वाद और संग का सुख ये तो आंखों से दिखने की बात है इसलिये बताते आयेगा परन्तु ब्रम्ह सुख तो मुझे अद्भुत दिखायी पड़ता है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। २६८ ।।

लेवे सुख सो जाणसी ।। दूजाँ पारख नाय ।।
सुणज्यो सब सुखरामजी ।। अे सुख काया मांय ।। २६९ ।।

उस ब्रम्ह का सुख तो पाता है वही जानता है । उस ब्रम्ह की सुख की कोई दूसरी परीक्षा नही है । सभी सुनो आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,यह ब्रम्ह का सुख तो शरीर में ही मिलता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २६९ ।।

काम न ब्यापे क्रोध ।। वाँ ना माया लव लेस ।।
इखर हे सुखरामजी ।। नित पत अेको व्हेस ।। २७० ।।

वहाँ काम भी नही प्रगट होता है और वहाँ क्रोध भी नही आता है और वहाँ माया का लव लेश भी नही है । वहाँ तो इखर याने खतम् न होनेवाला सुख है,व वह सुख नित्य प्रति एक जैसा है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २७० ।।

इध का ओछा ने हुवे ।। ना कोइ बार न पार ।।
हम देख्या सुखराम के ।। युँ सत्त धाम बिचार ।। २७१ ।।

वहाँ वह ब्रम्ह कभी अधिक या कभी ओछा होता नही है और इस ब्रम्ह सुख का कही भी आर-पार नही । आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि वह सत्त्धाम ऐसा है यह विचार करके मैने देखा ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २७१ ।।

खरा खरी बाता कहुँ ।। वाँ की याँ मै लाय ।।
केता हे सुखरामजी ।। सुख दुख अेक न मांय ।। २७२ ।।

वहाँ की सही-सही बात मैं यहाँ लाकर कहता हूँ । वहाँ ब्रम्ह में इस संसार के सुख और दु:ख एक भी नही है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २७२ ।।

अेसो ब्रम्ह बिचार हे ।। सुणता हो सब कोय ।।
सुंन सागर सुखराम के ।। अे वां साहेब होय ।। २७३ ।।

तो वह ब्रम्ह विचार ऐसा है वह सब कोई सुनो । वह सुन्न सागर जैसे है उसी प्रकार का साहेब है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २७३ ।।

परशा दशवें द्वार कूं ।। तिन में फेर न कोय ।।

केवळ बिन सुखराम के ।। वाँ जन सत्त न होय ।। २७४ ।।

मैं उसे दसवें द्वारपर जाकर अनुभव किया। इसमें कोइ सन्देह नही है। कैवल्यके बिना वहाँ संत जन सदा रहने वाले नही होते ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।२७४।

बड़ा तिथंगर सूरवाँ ।। केवळ मे सब सार ।।
ताही को सुखराम के ।। ओहि धाम बिचार ।। २७५ ।।

तिर्थकर बड़े शूरवीर है व सभी कैवल्य में सार है । उस तिर्थकर का रहने का यही स्थान है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २७५ ।।

केवळ हुवा अनेक ज्युँ ।। गिणत न आवे कोय ।।
चोईसुं सुखराम के ।। सब ही के शिर होय ।। २७६ ।।

कैवल्य अनेक हो गये उनकी गिनती नही की जा सकती उनमें चौवीस तिर्थकर सबसे उपर है। ।। २७६ ।।

या मेहमा में फेर बोहो ।। वाँ बिच इनके मांय ।।
आगे सुण सुखराम के ।। पहुँता अेकी गाँव ।। २७७ ।।

यह महिमा करने में अनेक अन्तर है,उसमे और इसमें अन्तर बहुत है । आगे तो ये सभी एक ही गाँव में पहूँचे है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २७७ ।।

चोई सूं इधकार हे ।। सुर नर पूजे आय ।।
आगे सुण सुखराम के ।। अेको बसती जाय ।। २७८ ।।

परन्तु इनमें चौवीस तिर्थकरका सबसे अधिक अधिकार है। उन्हें सुर(देव)और नर (मनुष्य)सभी आकर पूजते है। आगे तो सुनो, ये सभी एक ही वस्ती में जायेगें। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २७८ ।।

युँ कुदरत को खेल हे ।। केवळ उपजे नाय ।।
बेठा तो सुखराम के ।। सुद बुध दशवें मांय ।। २७९ ।।

यह कुदरत का ऐसा खेल है की सुदबुध से कैवल्य उत्पन्न होता नही परन्तु चौवीस तिर्थकर सुदबुध से दसवें द्वार पर जाकर बैठे है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।२७९।

बिसवा बीस इकीस सो ।। इनमें फेर न कोय ।।
केवळ मे सुखरामजी ।। पोरे को गुण जोय ।। २८० ।।

सोलह आने नही सतरह आने वहाँ जाकर बैठे है इसमें अन्तर नही है । कैवल्य तो आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,जब समय आयेगा तब कैवल्य उत्पन्न हो जायेगा) ,तो यह समय का गुण है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२८०।।

मोख पंथ मे फेर नही ।। सुध बुध सागे धाम ।।
केवळ मे सुखराम के ।। कुछ करणी को काम ।। २८१ ।।

मोक्ष के पंथ पर(मोक्ष के रास्ते में)फरक नही है । सुध-बुध से सागे वही का वही धाम है परंतु इस कैवल्य होने में कुछ करणी का काम है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २८१ ।।

राजा चढे दिसांवराँ ।। फोजाँ संग न कोय ।।
ने धूजे सुखराम के ।। पावाँ लगे न कोय ।। २८२ ।।

राजा यदी देशपर लड़ाई करने के लिए चढ्ढाई किया और राजा के साथ फौज नही है तो उस राजा से कोई नही धुजेगा और नही कोई पैर भी पड़ेगा। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २८२ ।।

करणी संग फोजाँ रहे ।। निवे भूप इम जोय ।।
तब सारा सुखराम के ।। सुर नर धूंजे लोय ।। २८३ ।।

इसी प्रकार जिसे कैवल्य उत्पन्न हुआ है वे करणी कुछ भी नही करते । उनके साथ करणी रूपी फौज नही है इसलिये उसे कोई भी मानता नही है । जिसके पास करणी बहुत है उसे राजा भी आकर नमन करता है । जैसे राजा के साथ फौज है तो उसे सभी नमन करते वैसे ही करणी करनेवाले चौवीस तिर्थंकरोको सुर लोक के देव और मृत्यु लोक के मनुष्य,सभी धुजते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२८३।।

हाकम संग फोजा चढे ।। फेर बाजे निसाण ।।
तब सारा सुखराम के ।। सनमुख मिलिया आण ।। २८४ ।।

हाकिम और सेनापती इनके साथ फौज रहती और वह लढाई के निशाण बताते,लढाई के बाजे बजाता तब उस सेनापती के सामने आकर सभी मिलते तथा हाकिम के साथ फौज रही,तो उस हाकिम को ही सभी मिलते है। परन्तु राजा के साथ फौज नही रही तो उस राजा से आकर कोई नही मिलता और कोई डरता भी नही है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।२८४।।

कागद मिले गढ पर चढे ।। तां कूं लखे न कोय ।।
आई बिध सुखराम के ।। केवळ के घर होय ।। २८५ ।।

और जिस राजा को बादशाह की तरफ से राज्य का पट्टा मिलता है वह राजा फौज के बिना आकर और लड़ाई किए बिना,गढ़ के उपर चढ़कर तख्त पर बैठ जाता है । उस राजा को कोई जानता नही । और वह राज सिंहासन पर बैठ जाता है इस प्रकार संत भी उनके पास करणी आदी ये फौज नही भी रही परंतु उन्हें सतस्वरुप साहेब से जीव तारने का परवाना रूपी कागज दे दिया तो वे कुछ भी करणी न करते कैवल्य संत हो जाते । वे संत कैसे हुए ये लोगों को मालुम ही नही पड़ता । जैसा बादशाह किसी को राज्य का पट्टा देकर राजा बना देता । उस राजा ने लड़ाई आदी कुछ भी नही की इसलिए किसी को भी मालमू ही नही हुआ और राजा हो गया । यही विधी आदि सतगुरू सुखरामजी

महाराज कहते है कैवल्य के घर मे है । चौवीस तिर्थंकरो समान कोई भी करणी न करते हुए भी,कैवल्य उत्पन्न हो जाता है और वे सतस्वरुपी संत हो जाते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २८५ ।।

चढिया ढोल बजाय के ।। तिण मे फेर न सार ।।
केवळ की सुखराम के ।। साहेब जाणन हार ।। २८६ ।।

वह बादशहासे परवाना मिला हुआ राजा और लड़ाई करके ढोल बजाकर चढा हुआ राजा इन दोनोके सिंहासन पर बैठने में अन्तर नही है,बादशहासे परवाना मिले हुअे राजा ने लड़ाई तो की नही,तो भी वह सिंहासन पर जरूर चढ गया ऐसे ही ये कैवल्य संत ने करणी तो कुछ की नही,तो भी वह सतस्वरुपी पद का संत हो गया । इस प्रकारके कैवल्य विधी को तो,साहेब ही(मालिक ही)जानते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २८६ ।।

क्या जाणू पोरो नही ।। के कुछ करणी फेर ।।
चडिया तो सुखराम के ।। सुध बुध पांचूँ घेर ।। २८७ ।।

कौन जानता है कैवल्य होने का पहारा(समय)नही है या कोई करणी का फरक है परंतु उपर ब्रम्हाण्ड में चढे है वे तो सुध-बुध से पाचो इन्द्रियों को घेरकर चढे है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २८७ ।।

आ कसर सूजे सही ।। ग्यान कहे समझाय ।।
सुख दुख सूं सुखराम के ।। क्यूँ मन गोता खाय ।। २८८ ।।

चौवीस तिर्थंकरो की यह कसर तो स्पष्ट दिखती है मै ज्ञान समझाकर बोलता हुँ फिर भी चौवीस तिर्थंकरोके बारेमे सुख-दु:खसे मन कुछ गोते खाता है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २८८ ।।

कळजुग केवळ नाव हे ।। ओ हम कियो बिचार ।।
पूंथा हंस सुखराम के ।। सागे मोख द्वार ।। २८९ ।।

इस कलियुग में तो कैवल्य ही सिर्फ नाव है यह मैं विचार करके देखा। इस राम नामके योग से हंस मोक्षद्वार जाकर पहुँचा है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले।२८९।

सिध सिल्ला देखी सही ।। ता को ओ उनमान ।।
पंखी पर सुखराम के ।। तासूं झीणी जाण ।। २९० ।।

मैं वहाँ सिद्धशिला(निर्वाण पद,जो जैन लोगों के तीर्थंकर का स्थान है,वह सिद्धशिला)मैंने देखी । उस सिद्धाशिला का यह अनुमान है,कि पक्षियों के पंख से भी बरीक है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २९० ।।

चोड़ी चवदे लोक में ।। सब आया उण हेट ।।
वाँ फोड़े सुखराम कें ।। व्हे साहेब सुं भेट ।। २९१ ।।

और वह सिद्धशिला चौदह भुवन और तीन लोक के इतनी चौड़ी है । चौदहों भुवन और तीन लोक इस सिद्धशिला के नीचे आ गये । वह सिद्धशिला मस्तक से फोड़कर उपर जाना पड़ता है । इसे फोड़कर उपर जाने पर ही साहेब से भेट होती है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २९१ ।।

इण उनमान ज पातळी ।। ओ रंग अेसो घाट ।।
चांदी सी सुखराम के ।। तासक सुन घर जाट ।। २९२ ।।

सिद्धशिला का पक्षी के पंख से भी बारीक है ऐसा अनुमान है उसका रंग और घाट ऐसा है । सिद्धशिला का रंग चांदी के जैसा है और जाटके घरकी तासळी,(खाने की तासली बीच में गहरी और उपर-उपर चौड़ी-चौड़ी रहती है) वैसी है इस प्रकारसे सिद्धशिला बीच में बत्तीस कोस मोटी और किनारे-किनारे चारो तरफ पक्षियों के पंख इतनी पतली है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २९२ ।।

गोळ गट दरसे सही ।। सुणो अेक न होय ।।
सिध्द सिल्ला सुखराम के ।। अेसी दीसे मोय ।। २९३ ।।

वह सिद्धशिला एक जैसी गोल है। उसमे एक भी कोना नही है। वह पैतालीस लक्ष योजन लम्बी है और पैतालीस लक्ष योजन चौड़ी है। उसके चारो तरफ का घेरा,एक करोड़ पैतीस लाख योजन है और शिला पैतालीस लाख योजन ऊची है तो ऐसी सिद्धशिला मुझे दिखाई पडी । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २९३ ।।

वा माथे सूं फोडणी ।। दूजो नाय उपाय ।।
सूराई सुखराम के ।। याँ अटकाणा आय ।। २९४ ।।

वह सिद्धशिला मस्तक से फोडनी पड़ती है । इसके सिवाय सिद्धशिला फोड़ने का दूसरा कोई उपाय नही है । जो शूरवीर संत है,वो भी यहाँ आकर अटक जाते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २९४ ।।

वाँ ते पाछा बावड़े ।। उलटा आवे जाण ।।
सांतुं सुर सुखराम के ।। ज्याँ सुख माणे आण ।। २९५ ।।

सातो मुँख उलटकर वापस आ जाते है,सातो मुँह(कान,नाक,आँख व मुँह)मिलकर सातो जहाँ सुख मानते है,(भोगते है ।)उस स्थान पर वापस आ जाते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २९५ ।।

याँ सुख बोळा पार बिन ।। छाड़े नहिं हंस धाम ।।
बड़ भागी सुखराम के ।। सो जन लांघे काम ।। २९६ ।।

वहाँ सुख अनेक है उनका अंत नही है। कोई भाग्यवान होगा वही संत इस धाम का उलंघन कर इस धामको पार करेगा। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।२९६।

सिध्द सिल्ला कूं फोड़ के ।। चढिया संत सधीर ।।

वाँ आ बिध सुखराम के ।। हंसो सायर तीर ।। २९७ ।।

उस सिद्धशिला को फोड़कर मैं धैर्य से उपर चढ़ गया । वहाँ जैसे हंस सरोवर के काठ पर जाकर बैठ जाता वैसे मै बैठ गया ऐसी विधी हुयी। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २९७ ।।

जेवाँसे आगो नीसरे ।। तो अब वार न पार ।।
निरभे सो सुखराम के ।। बेठो हंस बिचार ।। २९८ ।।

यदी हंस आगे जावे तो आगे आदी-अंत नही है वहाँ हंस याने मै निर्भय होकर बैठ गया ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २९८ ।।

दिन दिन व्हे हंस दुबळो ।। क्षिण पड़े सब देह ।।
थाके मन सुखराम के ।। केवळ पाँचु अेहे ।। २९९ ।।

उस स्थान पर दिन-प्रतिदिन हंस दुबला होता है और हंस का सारा शरीर भी क्षीण पड़ जाता है और वहाँ हंस का मन भी थक जाता है और पांचो इन्द्रियों का विषय रस भी थक जाते है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। २९९ ।।

ज्युँ सूरज के तेज सूं ।। पाळो गळे बिचार ।।
उण धाम सुण सुखराम के ।। हंसा सिर आ मार ।। ३०० ।।

जैसे सुर्य के तेज से बर्फ गलने लगती है,उसी प्रकार से उस धाम में हंस का शरीर बर्फ के जैसा गलता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। ३०० ।।

जे तो गळे ते तो मिले ।। पल पल निवतो थाय ।।
युँ हंसो सुखरामजी ।। दिन दिन पलटे जाय ।। ३०१ ।।

बर्फ जितना गलता है सब पानी बन जाता है । पल-पल जैसे बर्फ गलता है और कम होता है उसी प्रकार हंस वहाँ दिन ब दिन बर्फ जैसा गलता रहता है ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।३०१ ।।

सिध सिल्ला पर बेस रे ।। थोड़ी बेर बिचार ।।
जब हंसो सुखराम के ।। भूलो सुध बुध लार ।। ३०२ ।।

इस सिद्धशिला पर मैं थोड़ी देर बैठा रहा और थोड़ी देर विचार किया तब हंस याने मै पीछे की सुध-बुध सभी भूल गया। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।३०२।

चंहुँ दिस सुंन सागर भऱ्यो ।। दिष्ट न आवे धाम ।।
हंसा कूं सुखराम के ।। मोसर आयो राम ।। ३०३ ।।

चारों तरफ सुन्न सागर भरा हुआ दिखा । उस योग से रहने का स्थान आंखों में आता नही । उस समय हंस के काम मे सतस्वरुपी राम आया । ।। ३०३ ।।

जे वाँ पूंथा मोख कूं ।। मिलिया दसवें द्वार ।।
अब सांसो सुखराम के ।। मेरे नहिं लिगार ।। ३०४ ।।

जो संत मोक्ष को जा चुके है,वे वहाँ दसवे द्वारपर मुझे मिल गये,अब मुझे मोक्ष पानेकी चिन्ता फिक्र या शंका जैसी बात कोई नही रही । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ३०४ ।।

बिध हूँणो सोहि लिख्यो ।। ते सो हूवे आण ।।
हम न्यारी सुखराम के ।। कीवी जाग बखाण ।। ३०५ ।।

जैसी विधी होणा लिखा रहता वैसा आकर हो जाता है ऐसा कहते है परन्तु मैंने तो न्यारी दुसरी जगह की है। यह लिखी हुयी बात नही है यह विधी,मैंने भाग्य के लिखे हुए से अलग की। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले । ।। ३०५ ।।

मन पवना मिल पाँच ज्यूं ।। अे दुख दाई होय ।।
हम छाडया सुखराम के ।। त्रिगुटी के घर जोय ।। ३०६ ।।

मन और श्वास तथा पांचो मिलकर,ये सुखदायी तो होते,परन्तु आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,इन्हे तो मैंने त्रिगुटी के पहले के,घर में ही छोड़ दिया ।।३०६।।

ओऊँ सोऊँ छाडिया ।। चंद सूर घर आण ।।
हम कीवी सुखराम के ।। न्यारी तत्त पिछाण ।। ३०७ ।।

ओहम और सोहम इनको भी छोड़ दिया। इनको चंद्र और सुर्य के घर लाकर छोड़ दिया, सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,मैंने तो अलग ही बात की ।।३०७।।

भँवर गुँफा में मन थक्यो ।। पवन पाँचू आंन ।।
हम छाडया सुखराम के ।। ज्युँ कण छाड़े पान ।। ३०८ ।।

भवर गुफाँ में मन(त्रिगुटी में)मन भी थक गया। और त्रिगुटी में पहुँचनेपर श्वास और पाँचो विषय भी थक गये। इनको मैंने जैसा छोड़ा,जैसे दाणा अपने उपरी भुसे को छोड़कर,अलग होता है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। ३०८ ।।

निज मन मिलिया निरत सूं ।। कीयो सबे बिचार ।।
यूँ छंटया सुखराम के ।। ज्युँ घी माखन सार ।। ३०९ ।।

यह मेरा निजमन जाकर निरत से मिल गया और सभी प्रकार का विचार किये । जिस प्रकार सूप से,दाणे निकलकर अलग होते है या जैसे दही मथने पर छाछ से,सार रूपी घी अलग हो जाता है इस प्रकार मैं अलग हुआ ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।।३०९।।

गोर्स ज्यूँ किरिया सबे ।। ओऊँ माखण होय ।।
तत्त अेसो सुखराम के ।। घी करता यो जोय ।। ३१० ।।

दूसरी माया की या पारब्रम्ह की क्रिया छाछ(मट्ठा)के जैसी है और ओम यह मख्खन के जैसी है और यह सतस्वरुप तत्त यह ऐसा है जैसे तपाया हुआ घी है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। ३१० ।।

माखण भीसल जायगो ।। गोरस तुरत बिणास ।।
घी तायो सुखराम के ।। दिन दिन परमळ बास ।। ३११ ।।

मख्खन भी खराब हो जायेगा और छाछ तो एक ही दिन में खराब हो जायेगी परन्तु तपाये हुआ घी दिन-प्रतिदिन अच्छी सुगन्धी देगा। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले। ।। ३११ ।।

घी माखण सब गोरस सूं ।। सब याकी पेदास ।।
धुर खूंटा सुखरामजी ।। गाया के घट बास ।। ३१२ ।।

छाछ का(क्रिया करणी का)तुरन्त नाश होगा और मख्खन का(ओम का)भी नाश होगा । परन्तु तत्त(तपाया हुआ घी),यह दिन-प्रतिदिन अच्छा होगा। तपाया हुआ(घी भी,कुछ दिन के बाद खाने में निरूपयोगी होता है। परन्तु उस घी की किमत दिन ब दिन अधिक ही होती है कारण की वह पुराना घी दवा के लिए उपयोगी होता है इसलिए घी जितना पुराना होगा,उतनी ही उसकी किंमत अधिक होगी। पुराना घी आँखो की दवा के उपयोग में आता है । इसलिए वह पुराना घी ग्रॅम से बिकता है। घी,मख्खन और दही तथा छाछ सभी दूध से उत्पन्न होते है परन्तु मूल याने दूध यह गाय के घट मे रहता है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। ३१२ ।।

नित उपजे बिणसे सदा ।। अे थिर रहे न कोय ।।
यूँ ओऊँ सुखराम के ।। नेहेचे साहेब होय ।। ३१३ ।।

यह नित्य उत्पन्न होता है और नित्य विनाश को प्राप्त होता है। ये कोई भी(ओम तक के) स्थिर नही रहते। इस प्रकार ओम ही नाश को प्राप्त होगा परन्तु निश्चल तो साहेब ही है। ।। ३१३ ।।

केबो सुण बो सीख बो ।। आ बिध से हल निराट ।।
दुरलभ सो सुखराम के ।। पिछम सुर की बाट ।। ३१४ ।।

मुँह से कहना, कानसे सुनना और सिखना,यह विधी तो बहुत ही सरल है । परन्तु आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है,कि,पश्चिम याने बंकनाल के रास्ते से,एक्कीस स्वर्ग से जाणा यह रास्ता बहुत ही दुर्लभ है । ।। ३१४ ।।

बाणी केणी सेहेल हे ।। क्या अणभे मुख राम ।।
दुलभ सो सुखराम के ।। कहिये चोथो धाम ।। ३१५ ।।

बाजी बोलने(कविता करने)यह भी सरल है और अनुभव बताना, तथा मुँह से राम नाम लेना ये भी आसान है परन्तु चौथे धाम मे जाना यह बहुत दुर्लभ है ऐसा सतगुरू सुखरामजी महाराज कहते है । ।। ३१५ ।।

साख शब्द सब सेल हे ।। अणभे करत उचार ।।
भेद अर्थ सुखराम के ।। बिरळा जाणण हार ।। ३१६ ।।

साखी बोलना(कविता करना)और शब्द(पद जोड़ने)ये भी सरल है और जो अनुभव का उच्चारण करते है,वे भी आसानी से करते परन्तु भेद और अर्थ जानने वाले विरलै ही है । ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। ३१६ ।।

केहणे हारा ब्होत हे ।। सुणणे हार अनेक ।।
रटणा यूँ सुखराम के ।। लिव बंधे बिरळा पेक ।। ३१७ ।।

कहनेवाले भी है और सुननेवाले तो अनन्त है और इस प्रकार से रटन करने वाले भी है परन्तु लिव बंध(नाद से लगे हुए)विरलै ही देखने को मिलते है। ऐसा आदि सतगुरू सुखरामजी महाराज बोले ।। ३१७ ।।

।। इति ध्यान समाध को अंग संपूरण ।।